● श्री श्रीगुरुगौरांगौ जयतः ●

परमाराध्यतम नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108
श्री श्रीमद् भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज जी,
परमाराध्यतम ॐ विष्णुपाद 108
श्री श्रीमद् भक्तिबल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी
एवं
श्री गौड़ीय वैष्णववृन्द के मुखारविन्द से निकले हुये

भगवद्-उपदेश
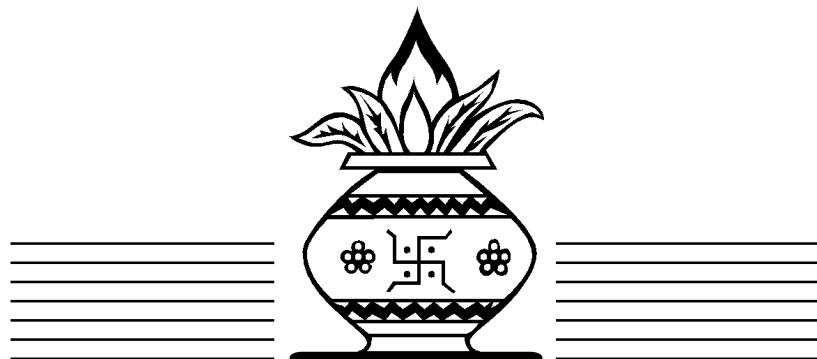
संग्रहकर्ता
यशोदा नन्दन दास
(योगराज सेखड़ी)

मूल-प्रस्तुति : श्री यशोदा नन्दन दास (श्री योगराज सेखड़ी)

मुख्य-सम्पादक : श्री धनंजय दासाधिकारी (श्री धर्मपाल सेखड़ी)

सम्पादक : श्री हरिपददास अधिकारी

प्रकाशक : श्री यशोदा नन्दन दास (श्री योगराज सेखड़ी)
397, ज्ञानी ज़ैल सिंह नगर,
जिला रोपड़, पंजाब पिन-1400001
दूरभाष : 01881-222281

कंप्यूटर टाइपिंग : श्री रिंकू कश्यप

डिजायनिंग : डॉ. भागवत कृष्ण नांगिया

प्रथम संस्करण : 1100 प्रतियाँ
श्रीराधाष्टमी, 23 सितम्बर, 2012

न्योछावर : 80 रुपये

मुद्रण-संयोजन : श्री हरिनाम प्रेस
बाग बुन्देला, श्री धाम वृन्दावन-281121
दूरभाष - (0565) 2442415, 07500987654

समर्पण

अखिल भारतीय श्री चैतन्य गौड़ीय मठ
के संस्थापक

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद
108 श्री श्रीमद्भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज जी

एवं

उनके प्रियतम शिष्य,
श्री चैतन्य गौड़ीय मठ के वर्तमान आचार्य,
ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्तिबल्लभ
तीर्थ गोस्वामी महाराज जी

के हस्त कमलों में इस अधम दास द्वारा

संग्रहीत उपदेशावली

सादर, सप्रेम व भावपूर्वक

समर्पित

प्राप्ति-स्थान

1. श्री योगराज सेखड़ी,
397, ज्ञानी ज़ैल सिंह नगर,
जिला रोपड़, पंजाब पिन-140001
दूरभाष : 01881-222281 मो. 094171-55452

2. श्री धर्मपाल सेखड़ी,
430, सैक्टर- 46 ए, चंडीगढ़
दूरभाष : 0172-2634913, 84271-21212

3. श्री आर.पी. सेखड़ी,
आयकर सलाहकार
नजदीक सैनिक रैस्ट हाउस
जिला- ऊना (हिमाचल प्रदेश)
मोबाईल : 094180-94284

4. श्री चैतन्य गौड़ीय मठ
अग्रवाल कालोनी,
नजदीक पटियाला ट्रांसपोर्ट
भठिंडा, पंजाब
दूरभाष : 0164-2223156

5. श्री चैतन्य गौड़ीय मठ,
सैक्टर - 20 बी. चंडीगढ़ - 160020
दूरभाष : 0172- 2708788

6. श्री हरिदास सेखड़ी
156, First Floor
सैक्टर- 40 ए, चंडीगढ़
मोबाईल : 094178-51008
094178-51009

दो शब्द

परम आदरणीय श्री यशोदा नन्दन दास जी (श्री योगराज सेखड़ी) जी लगभग गत 44 वर्षों से श्री चैतन्य गौड़ीय मठ से जुड़े हुये हैं। सन् 1967 में अपने श्रील गुरुदेव परमाराध्यतम् नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद्भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज जी से अपनी प्रथम भेंट के बाद उनका जीवन ही बदल गया। उसी वर्ष श्रीधाम वृन्दावन में उनका हरिनाम और सन् 1972 में नंदगांव में उनकी दीक्षा हुई। दीक्षा के बाद वे अपने श्रील गुरुदेव के प्रचार कार्य में पूर्ण सहयोग करते रहे। एक वरिष्ठ सरकारी पद पर रहते हुये और अपने परिवार की जिम्मेवारियों का निष्काम भाव से निर्वाह करते हुये, वे अपने गुरुदेव द्वारा बताये हुये आदेशों का पालन निष्ठापूर्वक करते रहे। वे स्वयं बड़ी प्रीति एवं लगन से हरिनाम करते और अपने भाई-बहिन, बन्धु-बांधवों एवं परिवार को भी हरिनाम करने के लिये प्रेरणा करते। एक बार जो भी उनके संपर्क में आ जाता, वे उसे अपने श्रील गुरुदेव से अवश्य मिलाते। इस प्रकार उन्होंने न केवल अपने परिवार बल्कि सैंकडों परिवारों को हरिभक्ति में लगाकर एक महान् पुण्य का कार्य किया है। इस महान् कार्य में उनकी धर्मपत्नी स्वर्गीय श्रीमती संतोष सेखड़ी सदैव उनके साथ रहीं ।

पूज्य माता, श्रीमती संतोष सेखड़ी जी बहुत ही धर्मपरायणा एवं हरिनामनिष्ठ थीं। गुरु-वैष्णव एवं भगवान् की सेवा में सदैव निमग्न रहने वाली उस परमवैष्णवी द्वारा दिये गये संस्कारों की अमिट छाप उनके पूरे परिवार में आज भी नज़र आती है। उनके तीनों बेटे श्री हरीदास जी, श्री पुरुषोतम दास जी एवं श्री गौरांग दास जी सपरिवार, श्रील गुरुदेव एवं वैष्णवों की सेवा में सदा तत्पर रहते हैं। एक छोटी सी बच्ची कुंदलता से लेकर प्रभुजी तक, घर का प्रत्येक सदस्य भक्तिरस में डूबा हुआ है। उनके घर में नित्यप्रति कीर्तन होता है। हरी-भरी वृन्दादेवी को देखकर मन मयूर नाच उठता है एवं प्रणाम करने के लिये सिर अपने आप झुक जाता है। इस पूरे परिवार पर श्री गुरुदेव, वैष्णव, भगवान् व वृन्दादेवी की अपार कृपा है।

श्री यशोदा नन्दन दास प्रभु जी ने अपने श्रील गुरुदेव, नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज जी, श्री चैतन्य गौड़ीय मठ के वर्तमान आचार्य एवं परमाराध्यतम् ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्तिबल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी एवं अन्य वैष्णववृन्द से हरिकथा के रूप में जो कुछ भी श्रवण किया है। उन्हीं दिव्य वचनों को, इस पुस्तक में प्रकाशित करके उन्होंने मानव समाज के लिये एक महान कार्य किया है । उनका यह प्रयास न केवल सराहनीय है, बल्कि साधकगणों का मार्गदर्शन करने वाला है। यद्यपि मुझ सरीखे अधम में, न तो कोई योग्यता है और न ही कोई बुद्धि-विवेक है, फिर भी मुझ पतित का उद्धार करने के लिये, इस पुस्तक को छपवाने की सेवा मुझे सौंपकर, प्रभु जी ने मुझ पर बहुत बड़ा उपकार किया है। उनके इस प्रेम व आशीर्वाद के लिये, मैं सदैव उनका ऋणी रहूंगा।

इस पुस्तक के प्रकाशन में, जो भी त्रुटियां रह गई हैं, उनकी जिम्मेवारी मैं स्वयं स्वीकार करता हुआ, क्षमा प्रार्थी हूं और यदि इस पुस्तक को पढ़कर एक भी साधक की हरिनाम में रुचि हो गई तो उसका श्रेय मेरे परमगुरुदेव, श्रील गुरुदेव एवं उन सभी वैष्णववृन्द को है जिनके दिव्य वचन इस पुस्तक में संग्रहीत किये गये हैं । सभी वैष्णवजन मुझ पर कृपा करेंगे, इसी आशा के साथ, सब को दण्डवत् प्रणाम करता हुआ और उनकी चरण रज को मस्तक पर धारण करता हुआ, मैं उनकी कृपायाचना करता हूं ।

वैष्णव चरण-रज-कण
हरिपद दास

विनम्र निवेदन

इस पुस्तक से संबंधित किसी भी प्रकार की जानकारी के लिये आप कृपया संपर्क करें।

हरी दास सेखड़ी :- 094178-51009
hdsekhri@yahoo.com

हरिपद दास :- 099141-08292

श्री श्री गुरु-गौरांगौ जयत:

निवेदन

श्री भगवान् के नाम, रूप, गुण, लीला और धाम आदि सब प्रकृति से अतीत हैं। स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ही जीवों के उद्धार हेतु नामरूप से इस कलिकाल में अवतीर्ण हुये हैं ।

श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु की परम्परा के दसवें आचार्य एवं अखिल भारतीय श्री चैतन्य गौड़ीय मठ प्रतिष्ठान के संस्थापक, परम आराध्यतम्, नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद परमहंस 108 श्री श्रील भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज जी के प्रथम दर्शन का सौभाग्य मुझे अप्रैल 1967 को जालंधर में प्राप्त हुआ। इसी वर्ष श्रीधाम वृन्दावन में, श्री बलदेव पूर्णिमा तिथि को मेरा हरिनाम हुआ। मेरी दीक्षा सन् 1972 के कार्तिक महीने में, श्री नन्दगांव के पावन सरोवर पर हुई और गुरुजी ने मेरा नाम यशोदानन्दन दास रखा। श्रील गुरु महाराज जी ने मई 1975 में प्रथम बार बठिंडा में शुभ पदार्पण किया था। उस समय मुझे श्री सनातन धर्म सभा के सेकेट्ररी श्री निरंजन दास जी भट्ठे वाले, भाना मल सराय के मालिक एवं मेरी सहधर्मिणी श्रीमती संतोष सेखड़ी का विशेष सहयोग मिला। इस प्रथम सम्मेलन के दौरान बठिंडा के सात व्यक्तियों (श्री जोगिन्दर पाल शर्मा जी की धर्मपत्नि, श्री लालचंद दुआ, वैद्य ओमप्रकाश, श्री माधव दास, श्री राजेन्द्र प्रसाद सेखड़ी, श्री प्रेम सेखड़ी एवं श्री सोमनाथ चीटू) ने मेरे गुरुजी का चरण आश्रय ग्रहण करके हरिनाम लिया था। उसी दौरान मेरे गुरुजी ने ऐसा आशीर्वाद प्रदान किया था कि बठिंडा में हरिनाम का खूब प्रचार होगा। उस समय मैं थर्मल प्लांट में सहायक कार्यकारी अभियंता के पद पर कार्यरत था। आज गुरुजी के आशीर्वाद से बठिंडा में मठ स्थापित हो गया है।

श्रील गुरु महाराज जी के अप्रकट होने के उपरांत, प्रचार का कार्य, परम पूज्यपाद श्रील भक्तिबल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी ने अपनी प्रचार पार्टी के साथ शुरु किया। मैंने अपने गुरु महाराज जी तथा श्री श्रील भक्तिबल्लभ तीर्थ महाराज जी का लगातार संग किया तथा उनके मुखारविन्द से हरिकथा सुनता रहा। मैंने अपने मठ के सन्यासी वर्ग तथा वैष्णववृंद जी से भी हरिकथा सुनी। उसका सार संग्रह करके ही मेरे द्वारा यह पुस्तक लिखी गई है। इस पुस्तक को पढ़ने से, आप सब को मेरे श्रील गुरुदेव, श्रील तीर्थ महाराज जी एवं समस्त वैष्णववृन्द के दर्शन होंगे और आपकी आध्यात्मिक उन्नति होगी।

यदि कोई भाग्यवान् जीव इस पुस्तक को पढ़ने से श्री हरिचरणों में लग जायेगा तो इस अधम का भी भवसागर से उद्धार हो जायेगा, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

वैष्णव कृपा आकांक्षी

यशोदा नन्दन दास

(योगराज सेखड़ी)

अपनी इच्छा के अनुसार चलने से गुरु-वैष्णव व भगवान् की सेवा नहीं होती। सेवा होती है गुरु जी के निर्देश और गुरुनिष्ठ-वैष्णवों के आनुगत्य में चलने से और उसी आनुगत्यमयी सेवा द्वारा ही गुरु, वैष्णव व भगवान् की वास्तविक सेवा और प्रसन्नता होती है।

-श्रील प्रभुपाद

वैष्णवों की सेवा को त्यागकर, श्रीकृष्ण की सेवा का छल या हरिनाम करने का अभिनय केवल दाम्भिकता है।

-श्रील प्रभुपाद

Copy of letter of His Divine Grace Bhakti Dayita Madhav Goswami Maharaj Ji written to Shri Yog Raj Sekhri Ji

All glory to Sree Guru & Gauranga

Sree Chaitanya Gaudiya Math
Sector 20-B, Chandigarh - 20
Phone : 23788
24-11-71

My dear Shree Sekhri,

Received your m.o. rupees hundred addressed to B.B. Tiratha Maharaj on 22-11-71.

On an urgent call from Calcutta math, Tirath Maharaj left Chandigarh yesterday for Calcutta.

I passed nil ×××× at P.G.I. Hospital without any trouble. Shreeman Bharati Maharaj and Madan Gopal Brahamchari stayed with me there in a cabin in a private ward. They made a lot of examination but except a mild heart attack there was no other complication. Again after fifteen days, they will re-examime me and give their final decision regarding my stay here. You need not be anxious for me. ***If you got any love for me, I would ask you to remember only Divine Supreme Master, Sree Krishna who is the embodiment of All the Rasas. By His rememberance, you will surely have His connection as well as attachment for Him.***

Material body is perishable. Little earlier or later it will be perished. So we need not think much of this perishable thing. Have Love for Sree Krishna. My affectionate blessings to you all.

Affectionately yours
–B.D. Madhav

Copy of letter of His Divine Grace Bhakti Ballabh Tirath Goswami Maharaj to Shree Yog Raj Sekhri

All glory to Sree Guru & Gauranga

Sree Chaitanya Gaudiya Math
35, Satish Mukherjee Road
Calcutta-26
Dt. 9.8.80

My dear shree Yog Raj Jee Sekhri

I am in receipt of your kind letter dated 5.8.80 and have noted the contents. Earlier I received one kind letter from you in Hyderabad intimating your safe arrival.

By the grace of Sree Guru & Gauranga, Hyderabad Math annual function terminated very grandly and successfully. We returned to Calcutta from Hyderabad after a short halt at Puri. On my arrival in Calcutta, I immediately went to Krishan Nagar to participate in the Installation Ceremony of the newly built 9-doomed temple. Large number of devotees participated in the 3-day religious conference devotional function of Krishan Nagar Math. After that we came to Jasra, a village in Nadia District, to participate in the Snan Yatra Festival of Sree Jagan Nath Jee.

I had my programme to go to Agartala to participate in the big Rath Yatra Festival of Math there. But as the situation there became very serious, the devotees of Calcutta and Agartala, discouraged me to go there. So I went to Puri instead of going to Agartala during Rath Yatra as per desire of Pujyapad Keshav Prabhu & other Vaishnabas.

Perhaps you have already came to learn that the birth site 2-storyed old building at Puri Math was demolished

and the construction work of the big temple is going on. We have decided to observe Kartika Varta this year at Puri from 20th Oct. to 22nd Nov. 1980. The advent anniversary of His Divine Grace Srila Guru Jee Maharaj will be celebrated specially at Puri this year. Gurupuja will be celebrated on the next day 19th November. The party will stay at Puri upto Ras Purnima i.e. upto 22nd Nov. Special religious meeting will be held on the Grand Road in which many dignitories including Chief Minister of Orissa, will participate. I request you and friends there to participate in this holy function.

It seems from your letter that you have got no programme this year to come to Vrindaban during Jhulan Festival. Instead you have informed, Sree Om Parkash Vaid with a party of sixty is coming to Vrindaban during Jhulan. As I understand from your talk with Om Parkash Jee and others at Bhatinda, it seemed to me that dispute between you and Om Parkash Vaid and other was due to misunderstanding. Both failed to understand the hearts of both. You should not be worried for this. If you are sincere, one day they will be able to understand this. It is practically very difficult to satisfy all in a festival. ***We should have the power to tolerate criticism, otherwise no body can undertake any work.***

It should be the "motto" of our life that we will not injure anybody in this World by words, mind or physical action. MayAll Merciful Sreela Gurudeva bestow us power to bear all oppressions, tribulations inflicted upon us and let us not have the spirit to take any measure of retaliation for the loss & tribulations we have suffered apparently which may seem to us due to no fault of ours. Actually speaking we suffer the fruits of our own actions, others

are only instrumental. Tolerance is applicable there where we have not done actually any wrong but we are wrongly blamed.

Tolerance is one of the foremost qualities of a SADHU. Sadhus are tolerant as they have got no other desire except the fulfillment of the desires of Lord and His devotees. Those who have got many ulterior motives cannot be tolerant.

Sree Hansraj Jee Bhatia & Jammu people may press me to go to Jammu in the month of September which they say they have fixed it for Jammu. If I am go to Jammu, Bhatinda people will surely press me to drop at their place for a few days. If I can drop Jammu Programme Bhatinda Programme will be automatically dropped. It will not be wise to turn down the request of the Bhatinda devotees out right because it will have a bad effect. They may have frailties, but we should tolerate this and try to help them for their rectification affectionately and sympathetically. I am reaching Vrindaban with party on 20th August and return to Calcutta on 30th August. We are in a way. Dandwat Parnam.

Affectionately yours,
Bhakti Ballabh Tirtha

A devotee of the Lord does not feel the pangs of material miseries. This state of life is called Brahma nirvana or the absence of material miseries.

–Bhagavat Gita 5.26

Copy of Gaurashirvad title awarded to Sree Yog Raj Sekhri, Bhatinda

All glory to Sree Guru & Gauranga

The Sree Chaitanya Bani Pracharini Sabha has awarded you ***Sree Yog Raj Sekhri, Bhatinda.*** *Gaurashirvad title* ***Sevabrata (सेवाव्रत)*** *for your remarkable contribution towards spread of Sree Chaitanya Bani in the Annual sitting of the Sabha held at Sree Chaitanya Gaudiya Math Premises, Ishodyan, Sreemayapur, Nadia on Sree Gaurashirvad tithi, Saturday, 1st March, 1980 at 4 p.m.*

Sree Chaitanya Bani
Pracharini Sabha, Ishodyan
Sree Mayapur (Nadia)
1-3-1980

Sd/-
(Bhakti Ballabh Tirath)
President

Remembering of Vaishnavas

Remembering Vaishnavas will remove all anti-devotional propensities from mind. All sorts of anti-devotional ideas are removed just by getting the mercy of Vaishnavas.

Copy of letter from Param Pujyapad Srila Tridandi Swami Bhakti Ballabh Tiratha Goswami Maharaj Ji

from

Sree Chaitanya Gaudiya Math (Regd.)
Grand Road, Puri (Orissa)

Dated 01-11-1980.

My dear Sree Yog Raj Ji, Sekhri

So glad to get your kind letter dated 26-10-1980. We arrived here on 20th at time with a party of ascetic and household devotees. We are performing Nagar Sankirtan daily morning and are having daily morning, afternoon and night devotional programmes as we usually do in (Niamsheba) Damodar month. We daily perform Guruparmpara, "Guru bandana", "Vaishnab bandana" Shikshastak (eight slokes of Sree Chaitanya Mahaprabhu and their Bengali songs translated by Srila Thakur Bhakti Vinode) Damodrastak and Krishanlila Kirtan in eight different times. Param Pujyapad Sreemad Bhakti Promode Puri Goswami Maharaj (elder God brother of His Divine Grace of Sreela Guru Maharaj) is holding daily discourses on "Bhajan-Rahasya" written by Thakur Bhakti Vinode in the morning and on "Sreemad Bhagwatam" at night. I am holding discourses on Sree Chaitanya Charitamrita (Sanatan Siksha) daily afternoon.

The Holy Advent Anniversary of His Divine Grace Srila Guru Maharaj Ji will be specially celebrated here on 18th November. A 4-Day religious meetings will be held on the occasion from 15th November to 18th November in which many dignitaries of Orissa & West Bengal will participate. Mahaprasad will be distributed to general public on 19th

November on the Mahotsab day. We shall be exceedingly delighted to get the pleasure of your company and the company of the devotees of Bhatinda in the above holy function. If you are unable to come, you should speak to all God brothers and God Sisters to contribute according to their capacity towards Advent Anniversary of Srila Guru Jee Maharaj at Puri. That will be a kind of service of them to Sreela Guru Maharaj.

We are grateful to you to get the pleasure of your company at Jammu for which you took so much pains. Your participation with us in the preaching tour greatly contributes to our preaching.

Seclusion is better than evil company, but the company of the bonafide Sadhu is better than Seclusion. Although you can keep yourself aloof outwardly from wordly people in seclusion, you can inwardly think unholy ideas of the world which have already been stored in your mind. The senses are like Cameras, take photos from the world and keep their ideas in the mind, when we try to meditate in a lonely place, these ideas came up and disturb our meditation. How we can empty these ideas from the mind. Material ideas are light. If we can impart holy weighty ideas of the Absolute Divine Personality, material ideas will be gradually emptied from the mind. We can get Divine ideas only from a bonafide Sadhu. So submission to and association of a real Sadhu is essential for getting eternal welfare. Real bonafide Sadhu is rarely to be found in this world. When we become eligible for getting the association of a real Sadhu by our eternal good deeds, we can get it by the grace of the Almighty Sree Hari. Sree Tulsi Dass Ji says "Bina Harikripa mile nahi Santa". Sree Hari is impartial and All merciful. There is no fear of

getting injustice from Sree Hari who is all good. When we shall become eligible for getting His actual grace, we shall get it. There are very few people in this world who actual want eternal welfare. Most of the people desire for mundane benefits. When we want quality, we can not get quantity. When we want quantity, we can not get quality. We cannot get both at a time. We shall have to sacrifice quantity if we want quality. A man of quality can actually do benefit to the Society. A large quantity without quality is of no use. We are blessed that we had the great fortune to come in contact with a direct associate of Supreme Lord Sree Krishna, a gignate spiritual personality who is one with God. If we remember Him and work according to His teachings, we can achieve all attainments. Such a spotless spiritual personality is rarely to be found now a days. Our all merciful Sreela Guru Deva is the grace incarnate of Sri Krishna. It is our ill luck that we have been deprived of His direct touch and deprived of getting direct teachings from Him. Although physically he is not before us, He is always with us. We shall feel it, if we actually want His grace from the core of our hearts.

We shall stay here till 23rd November and hope to return Calcutta early December after a short halt at Midnapore District. We are on a way. My love to you all. Dandwat Parnam.

Affectionately yours,
Bhakti Ballabh Tirtha

* * *

त्रिदण्डिभिक्षु भक्तिप्रसाद पुरी महाराज जी द्वारा श्री योगराज सेखड़ी जी को लिखे गये पत्र की कापी

श्री चैतन्य गौड़ीय मठ

एक्ट XXXVI 1961 (पं बंगाल) के अंतर्गत रजिस्टर्ड

मथुरा रोड, पो. वृन्दावन–281121
दिनांक 26.08.1991

श्री वैष्णवचरणों में दण्डवत् प्रणाम पूर्वक निवेदन
श्री योगराज सेखरी प्रभु,

मैं आशा करता हूँ, परम करुणामय श्रीहरि की कृपा से आपका भजन कुशल होगा।

श्री भारद्वाज जी के पत्र से मालूम हुआ कि श्री हरिदास की माता जी का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। सुनकर यहां सबको दु:ख हुआ।

मंगलमय श्रीहरि के विधान को कोई नहीं समझ सकता। **माता जी निष्कपट, वैष्णव सेवापरायणा हैं।** अपनी दासी पर श्रीहरि किस प्रकार से कृपा कर रहे हैं, वह प्रभु ही जानते हैं। माता जी के कानों में जैसे हर समय श्रीहरिनाम प्रवेश करता रहे, ऐसा होने से अच्छा है।

श्री गौरांगदास कल सायं आ गया था। उसके हाथ से सेवा बाबत 50/– रूपये मिले जी। श्री ठाकुर जी की चरण तुलसी एवं चरणामृत उसके हाथ भेज रहा हूँ। परम करुणामय श्री हरि की कृपा से श्री राधागोविंद जी का झूलन उत्सव विशेष समारोह सहित सम्पन्न हुआ। भठिण्डा, चण्डीगढ, अम्बाला, जालंधर, देहली एवं यू.पी., राजस्थान से बहुत भक्तजन आये हुये हैं।

अत्र कुशलं। आपकी धर्मपत्नी को मेरी जय श्री राधेश्याम कहें। श्रीहरि दास, परिवार के साथ, श्री पुरुषोत्तम दास को मेरा आशीर्वाद दें। दण्डवत् प्रणाम। इति।

वैष्णवदासानुदास,
भक्ति प्रसाद पुरी

Copy of the letter of Sri Srimad B.V. Bharati Maharaj Ji to Shri Yog Raj Sekhri Ji

All glory to Sree Guru & Gauranga

Sree Chaitanya Gaudiya Math,
Grand Road - Puri
19-9-91

With Dandabat pranam to the lotus feet of Vaishnaba.

My dear Sekhri Ji,

I am extremely shocked to know that our god-sister Smt. Santosh Sekhri left this world on 31-8-91. ***She was Santosh not by name but in real form. Now-a-day lady like Santosh is rarely to be found. Her amicable nature, serviceful attitude and devotional character charmed us.*** *Unfortunatly, we deprived from her association.*

We pray for her departed Soul. Knowingly or unknowingly If I commit any curse to her lotus feet, please excuse me for the same and bless me to achieve our goal- 'Krishna prema'. You have lost better part of your life.

We are in a way. My dandabat pranam to you and affectionate blessings to your sons. I have no word to solace you and your sons.

Affectionately yours,
B.V. Bharati

Chant...
Hare Krishna Hare Krishna Krishna Krishna Hare Hare
Hare Ram Hare Ram Ram Ram Hare Hare.
...and be happy.

विषय - सूची

जैव धर्म से—

भक्ति के जितने भी प्रकार के अंग हैं, उनमें श्रीहरिनाम का अनुशीलन ही प्रधान अंग है।

–श्रील भक्तिविनोद ठाकुर

नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद 108 श्री श्रीमद् भक्ति दयित
माधव गोस्वामी महाराज जी की जय

प्रणाम–मन्त्र

नमः ॐ विष्णुपादाय रूपानुगप्रियाय च ।
श्रीमते भक्ति दयित माधव स्वामी–नामिने ।।

कृष्णाभिन्न–प्रकाश–श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे ।
क्षमागुणावताराय गुरवे प्रभवे नमः ।।

सतीर्थप्रीतिसद्धर्म–गुरुप्रीति–प्रदर्शिने ।
ईशोद्यान–प्रभावस्य प्रकाशकाय ते नमः ।।

श्रीक्षेत्रे प्रभुपादस्य स्थानोद्धार–सुकीर्तये ।
सारस्वत गणानन्द सम्वर्धनाय ते नमः ।।
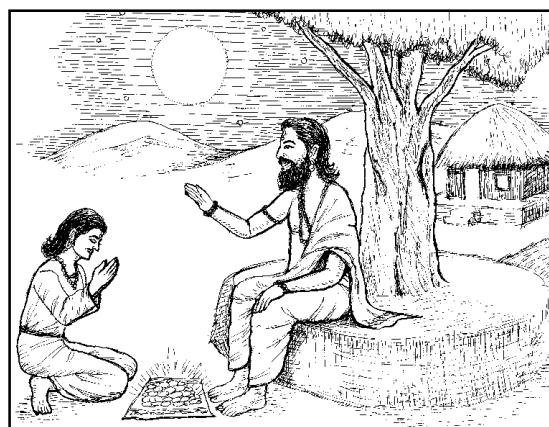
श्रीश्रीगुरु गौरांगौ जयतः

मंगलाचरण

सपरिकर-श्रीहरि-गुरु-वैष्णव वन्दना

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च,
श्रीरूपं साग्रजातं सहगण - रघुनाथान्वितं तं सजीवम्।
साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं कृष्णचैतन्यदेवं,
श्रीराधाकृष्णपादान् सहगण-ललिता श्रीविशाखान्वितांश्च।।1।।

श्रीगुरुदेव-प्रणाम

ॐ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।2।।

श्रील माधव गोस्वामी महाराज-प्रणाम

नमः ॐ विष्णुपादाय रूपानुग प्रियाय च।
श्रीमते भक्तिदयितमाधवस्वामी - नामिने।।
कृष्णाभिन्न-प्रकाश-श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे।
क्षमागुणावताराय गुरवे प्रभवे नमः।।
सतीर्थप्रीतिसद्धर्म - गुरुप्रीति - प्रदर्शिने।
ईशोद्यान - प्रभावस्य प्रकाशकाय ते नमः।।
श्रीक्षेत्रे प्रभुपादस्य स्थानोद्धार - सुकीर्तये।
सारस्वत गणानन्द - सम्वर्धनाय ते नमः।।3।।

श्रील प्रभुपाद-प्रणाम

नमः ॐ विष्णुपादाय कृष्णप्रेष्ठाय भूतले।
श्रीमते भक्तिसिद्धान्त-सरस्वतीति नामिने।।
श्रीवार्षभानवीदेवीदयिताय कृपाब्धये।
कृष्णसम्बन्धविज्ञानदायिने प्रभवे नमः।।
माधुर्योज्ज्वलप्रेमाढ्य-श्रीरूपानुगभक्तिद।
श्रीगौरकरुणाशक्तिविग्रहाय नमोऽस्तुते।।
नमस्ते गौरवाणी श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे।
रूपानुगविरुद्धापसिद्धान्त - ध्वान्तहारिणे।।4।।

श्रील गौरकिशोर-प्रणाम

नमो गौरकिशोराय साक्षाद्वैराग्यमूर्त्तये।
विप्रलम्भरसाम्भोधे! पादाम्बुजाय ते नमः।।5।।

श्रीलभक्तिविनोद-प्रणाम

नमो भक्तिविनोदाय सच्चिदानन्द-नामिने।
गौरशक्तिस्वरूपाय रूपानुगवराय ते।।6।।

श्रील जगन्नाथदास बाबाजी-प्रणाम

गौराविर्भावभूमेस्त्वं निर्देष्टा सज्जनप्रियः।
वैष्णवसार्वभौम-श्रीजगन्नाथाय ते नमः।।7।।

श्रीवैष्णव प्रणाम

वाञ्छाकल्पतरूभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः।।8।।

श्रीगौरांगमहाप्रभु-प्रणाम

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्यनाम्ने गौरत्विषे नमः।।9।।

श्रीराधा-प्रणाम

तप्तकाञ्चनगौरांगि! राधे! वृन्दावनेश्वरि!।
वृषभानुसुते! देवि! प्रणमामि हरिप्रिये!।।10।।

श्रीकृष्ण-प्रणाम

हे कृष्ण! करुणासिन्धो! दीनबन्धो! जगत्पते!।
गोपेश! गोपिकाकान्त! राधाकान्त! नमोऽस्तुते।।11।।

श्रीसम्बन्धाधिदेव-प्रणाम

जयतां सुरतौ पंगोर्मम मन्दमतेर्गती।
मत्सर्वस्वपदाम्भोजौ राधामदनमोहनौ।।12।।

श्रीअभिधेयाधिदेव-प्रणाम

दीव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः, श्रीमद्रत्नागारसिंहासनस्थौ।
श्रीश्रीराधा-श्रीलगोविन्ददेवौ, प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि।।13।।

श्रीप्रयोजनाधिदेव-प्रणाम

श्रीमान् रासरसारम्भी वंशीवटतटस्थितः।
कर्षण् वेणुस्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः।।14।।

श्रीतुलसी-प्रणाम

वृन्दायै तुलसीदेव्यै प्रियायै केशवस्य च।
विष्णुभक्तिप्रदे देवि! सत्यवत्यै नमो नमः।।15।।

श्री श्रीगुरुगौरांगौ जयतः

-1-

भगवद् प्राप्ति का एकमात्र उपाय भगवद् कृपा

20.05.1979

भगवान् को प्राप्त करने के लिये एकमात्र साधन, भक्ति या भगवद् कृपा है, अन्य कोई साधन नहीं। कई बार ऐसे उदाहरण दिये जाते हैं कि भठिन्डा शहर में किसी भी रास्ते से जाया जा सकता है। ऐसे ही भगवान् को किसी भी साधन से प्राप्त किया जा सकता है। भठिन्डा एक भौतिक वस्तु (Lump of matter) का बना हुआ है। मगर जीव चिन्मय है और इससे superior है, इसलिये जीव भठिन्डा में किसी भी रास्ते से जा सकता है। एक चींटी भी अपनी मर्जी से भठिन्डा शहर में किसी भी रास्ते से जा सकती है। जबकि भगवत् धाम चिन्मय है और जीव शक्ति से बहुत श्रेष्ठ है। इसलिये भगवान् की कृपा से ही भगवत् धाम में जाया जा सकता है। श्रेष्ठ वस्तु को पाने के लिये उसकी कृपा ही जरूरी है।

उदाहरण के तौर पर Prime Minister के घर में, जोकि Lump of matter का बना हुआ है Prime Minister की इजाज़त के बगैर नहीं जाया जा सकता क्योंकि वहां Prime Minister का ऐश्वर्य काम करता है। इसी तरह भगवद् धाम को, जो कि पूरा ऐश्वर्यमय है, वहाँ के अधिपति की कृपा के बगैर प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भगवान्, भगवद् धाम को सिर्फ एक ही उपाय से प्राप्त किया जा सकता है और वह है भगवान की कृपा।

न तो भगवान् से कोई बड़ा है और न ही कोई उनके बराबर है, इसलिये उनको कोई भी जीव अपनी शक्ति से या अपनी मर्जी से अपनाये हुये साधन द्वारा प्राप्त नहीं कर सकता है। सिर्फ भगवान् की कृपा ही एकमात्र भगवान् को प्राप्त करा सकती है। सूरज को, जो कि प्राकृतिक वस्तु है, सूरज के माध्यम् से ही देखा जा सकता है, अन्य साधनों द्वारा सूरज को नहीं देखा जा सकता जो कि प्राकृतिक वस्तु है। इसी तरह भगवान् को भी भगवान् की कृपा के माध्यम् द्वारा ही देखा जा सकता है इसलिये जीवमात्र को चाहिये कि अन्य साधनों को छोड़कर भगवान् की सेवा भक्ति के लिये प्रयास करें जोकि जीवमात्र का स्वरूप धर्म है।

***

विद्यमाने हि संसारे कृष्णनाम्नि महौषधे।
मानवा मरणं यान्ति पापव्याधिप्रपीडिताः।
न पिबन्ति महामूढाः कृष्णनामरसायनम्।।

(पद्मपुराण 72/18)

संसार में श्रीकृष्ण नाम सबसे बड़ी औषधि है। इसके रहते हुए भी मनुष्य पाप और व्याधियों से पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं–यह कितने आश्चर्य की बात है! कि लोग कितने बड़े मूर्ख हैं जो श्रीकृष्ण–नाम रूपी रसायन का पान नहीं करते।

– 2 –

जीव का स्वरूप

जीव भगवान् का सीधा अंश नहीं है। यदि जीव भगवान का सीधा (Direct) अंश होता तो भगवान् की तरह इसमें भी भगवान् जैसे गुण होते। जैसे भगवान् सर्वशक्तिमान हैं यह भी सर्वशक्तिमान होता। मगर ऐसा नहीं है। जैसे भगवान् सर्वव्यापक हैं, यह भी सर्वव्यापक होता। पर ऐसा नहीं है।

ऊपर दिये गये दो उदाहरणों से सिद्ध होता है कि जीव भगवान् का सीधा (Direct) अंश नहीं है। कई लोगों का यह मत है कि जीव ही ब्रह्म है पर यह एक भ्रान्ति है। इससे यह पता चलता है कि जीव भगवान् की किसी और शक्ति का ही अंश है क्योंकि जीव चिन्मय है। इसमें इच्छा, क्रिया और अनुभूति है। इसलिये जीव भगवान् की चिन्मय शक्ति का अंश है। शक्ति सर्वदा शक्तिमान के अधीन रहती है और शक्तिमान की सेवा करती है, इसलिये जीव भगवान् का सेवक है जोकि इसका स्वरूप धर्म है। सर्वशक्तिमान भगवान् की सेवा करना ही जीवमात्र का स्वरूप धर्म है।

* * *

श्रीराधा व श्रीकृष्ण एक ही हैं। केवल लीला करने के लिये दो हुये तथा श्रीचैतन्य महाप्रभु के रूप में फिर एक हो गये।

—श्रील गुरुदेव

– 3 –

जीव भगवान् की किस शक्ति का अंश है

भगवान् की अनंत शक्तियाँ हैं। उनमें मुख्य तीन हैं। अन्तरंगा शक्ति, बहिरंगा शक्ति तथा तटस्था शक्ति।

1. अन्तरंगा शक्ति (Internal Potency)
2. बहिरंगा शक्ति (External Potency)
3. तटस्था शक्ति (Marginal Potency)

जीवमात्र ही चिन्मय है। जीव में इच्छा, क्रिया और अनुभूति है तथा जीव स्वतंत्र (Independent) भी है। यदि जीव स्वतंत्र न होता तो जड़ के समान होता। जैसे किताब जड़ होने के कारण अपनी इच्छा से इधर-उधर नहीं जा सकती, अगर जीव भी जड़ होता तो इधर उधर नहीं जा सकता था। मगर ऐसा नहीं है, जीव चेतन होने के कारण भगवान् की तरफ भी जा सकता है और माया की तरफ भी जा सकता है। यह नदी के तट (नदी के पानी और जमीन के बीच की लकीर) जैसा है। इसलिये जीव भगवान् की तटस्था शक्ति (Marginal Potency) का अंश है।

* * *

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा।।

श्रीहरि का नाम, श्रीहरि का नाम और केवल श्रीहरि का नाम। कलियुग में इसके सिवा दूसरी कोई गति नहीं है, नहीं है, नहीं है।

– 4 –

जीव का भगवान् के साथ संबंध

जीवेर स्वरूप हय कृष्णेर नित्यदास।
कृष्णेर तटस्था शक्ति भेदाभेद प्रकाश।।

जीव स्वरूप से भगवान् श्रीकृष्ण का नित्यदास है और यह भगवान् की तटस्था शक्ति का अंश है। जीव का भगवान् के साथ भेद भी है और अभेद भी।

भेद :-

1. भगवान् सर्वशक्तिमान हैं पर जीव सर्वशक्तिमान नहीं है।
2. भगवान् सर्वव्यापक हैं पर जीव सर्वव्यापक नहीं है।
3. भगवान् विभु तत्त्व हैं पर जीव अणु तत्त्व है।

अभेद :-

भगवान् और जीव अविनाशी (नाश न होने वाले) हैं अर्थात् दोनों नित्य एवं चिन्मय हैं।

***

हरे केशव गोविन्द वासुदेव जगन्मय।
इतीरयन्ति ये नित्यं न हि तान् बाधते कलिः।।

(बृहन्नारदीय पुराण)

हे हरे! हे केशव! हे गोविन्द! हे वासुदेव! हे जगन्मय! –इस प्रकार जो लोग नित्य उच्चारण करते हैं, उन्हें कलियुग तनिक भी कष्ट नहीं देता।

– 5 –

जीव कैसे माया के जाल में फँसा ?

जीव भगवान् श्रीकृष्ण की तटस्था शक्ति का अंश है और स्वतंत्र है। जीव भगवान् कृष्ण की तरफ भी जा सकता है और माया की तरफ भी जा सकता है। जिस जीव ने माया की तरफ निगाह की, कि मैं माया का भोग करूंगा, माया ने उसे अपने जाल में ले लिया। जिन जीवों ने भगवान् की तरफ निगाह की, वे भगवान् के राज्य में चले गये और जीवनमुक्त हो गये। भगवान् से विमुख होने से माया देवी ने जीव को माया के राज्य को भोग करने के लिये दो शरीर दे दिये : सूक्ष्म शरीर तथा स्थूल शरीर

सूक्ष्म शरीर :– मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार

स्थूल शरीर :– यह रक्त, मांस, हड्डियों का बना हुआ शरीर है जोकि पाँच भौतिक शरीर है और पाँच तत्त्वों (आकाश, वायु, जल, अग्नि, धरती) से बना हुआ है। जीव को भगवान् की तरफ से विमुख होने के कारण माया देवी ने, उसे शासित करने के लिये– सूक्ष्म और स्थूल शरीरों में यातनायें भोगने के लिये, कैद कर दिया जिससे वह अपने स्वरूप धर्म (भगवान् की नित्य दासता) को भूल कर, शरीर संबंधी धर्मों में लिप्त हो गया। उदाहरण के तौर पर, पानी का स्वरूप धर्म है तरलता। यदि तापमान को घटा कर शून्य किया जाये तो पानी बर्फ बन जायेगा। बर्फ बनने से पानी का जो स्वरूप धर्म था वह बदल गया। इसे निमैत्तिक धर्म कहते हैं। पानी को यदि गर्म किया जाये तो वह वाष्प बन जायेगा, जिसका धर्म पानी के धर्म से अलग है। यह भी पानी का निमैत्तिक धर्म हुआ।

इसी तरह जीव के बहुत सारे निमैत्तिक धर्म हैं। जिस भी शरीर में जीव जायेगा उसका धर्म अपनायेगा। यदि अब वह मनुष्य है तो मनुष्य धर्म को अपनाएगा, अतः वह अन्न खाएगा। जब वह जानवर होगा तो घास, मांस वगैरा खाएगा। जीव को भगवान् श्री कृष्ण से विमुखता के कारण चौरासी लाख निमैत्तिक धर्म मिले हैं। यदि वह परिवर्तनशील धर्मों के कारण भगवान् की विमुखता को दूर नहीं करता तो उसे चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करना पड़ेगा। अन्य-अन्य साधनों से उसका माया बंधन और पक्का होता जाएगा। जैसे बर्फ का तापमान यदि Maintain किया जाए तो बर्फ, बर्फ ही रहेगी। चाहे उसको काट दिया जाये। चाहे टुकड़े-टुकड़े कर दिया जाये। इसी तरह वाष्प, वाष्प ही रहेगी यदि उसका तापमान Maintain किया जाए। इसी तरह जीव की यदि भगवान् से विमुखता रहे तो उसका चौरासी लाख़ योनियों में परिवर्तन होता रहेगा। उसे कोई दूसरा साधन नहीं हटा सकता। इसलिये यह सिद्ध होता है कि भगवान् श्री कृष्णचन्द्र की सन्मुखता ही जीव को माया के जाल से छुटकारा दिला सकती है न कि अन्य साधन। सन्मुखता लाभ करने के लिये जीव मात्र को यह जानना जरूरी है कि भगवान् के साथ जीव का, जीव के साथ माया का और माया के साथ भगवान् का क्या संबंध है? संबंध को कैसे पक्का किया जा सकता है? संबंध पक्का होने से क्या उपलब्ध होगा?

***

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

– 6 –

भगवान् श्री कृष्ण की शक्तियाँ

भगवान् श्रीकृष्ण की अनंत शक्तियाँ हैं उनमें यह तीन शक्तियाँ प्रधान हैं :-

1. अन्तरंगा शक्ति
2. बहिरंगा शक्ति
3. तटस्था शक्ति

जो चिन्मय जगत् (वैकुण्ठ धाम) है वह भगवान की अन्तरंगा शक्ति का पसारा है।

बहिरंगा शक्ति, अंतरंगा शक्ति की छाया है। यह शक्ति जीव मात्र को, माया के फँदे में डालने के लिये योग्य है। सारे ब्रह्मांडों का जो पसारा है वह माया शक्ति का पसारा है, जो दो शक्तियों के जोड़ से है अर्थात् जीव शक्ति और माया शक्ति। जो अपराधी (भगवान् से बहिर्मुख) जीव हैं, माया को भोगने की लालसा से माया में फँस जाते हैं और अपनी ताकत से माया से पार नहीं हो सकते। उनके लिये भगवान् श्री कृष्ण ने गीता में कहा है-

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।।

(गीता 7-14)

''हे अर्जुन! मेरी बहिरंगा शक्ति (माया) इतनी दुस्तर है कि इससे छुटकारा पाना बहुत ही कठिन है। जो एकमात्र मेरी (भगवान् श्रीकृष्ण जी की) शरण में आ जाता है वही माया से छुटकारा पा सकता है।''

उदाहरण के तौर पर समुद्र में जब ज्वार-भाटा आता है तो लहरें कभी अंदर की तरफ जाती हैं और कभी बाहर की तरफ जाती है, जो कोई अंदर की लहर का सहारा लेगा वह अंदर की तरफ जाएगा, जो बाहर की लहर का सहारा लेगा वह बाहर निकल जायेगा। इसी तरह जो अन्तरंगा शक्ति है वह बाहर की लहर की तरह है और जो बहिरंगा शक्ति है वह अन्दर की लहर की तरह है।

भगवान् श्रीकृष्ण की पूर्ण स्वरूप शक्ति श्रीमति राधिका की चित् शक्ति का दूसरा नाम अन्तरंगा शक्ति है। श्रीमती राधा रानी अन्तरंगा शक्ति की घनीभूतमूर्ती है, और जो उस की छाया है वह है महामाया-दुर्गा देवी। जो श्रीमती राधा रानी की अंतरंगा शक्ति की शरण लेते हैं, वे बाहर वाली लहर की तरह भवसागर से बाहर निकल जाते हैं और जो बहिरंगा शक्ति महामाया दुर्गा की शरण ग्रहण करते हैं वे अंदर वाली लहर की तरह भव सागर में और अंदर की तरफ धंस जाते हैं। कहने का भाव है, माया में फँस जाते हैं।

हम साधकों को अन्तरंगा शक्ति की शरण ग्रहण करनी चाहिये। जैसे अन्दर और बाहर की लहर एक ही समुद्र से हैं इसी तरह उपरोक्त शक्तियाँ भी भगवान् श्रीकृष्ण की शक्तियाँ हैं। महामाया दुर्गा देवी को भगवान् की शक्ति मानते हुये सम्मान देना होगा मगर उसका सहारा न लेकर अन्तरंगा शक्ति का सहारा लेना चाहिये। जैसे आग की चिंगारी हवा का बल प्राप्त करके एक भयानक आग में तबदील हो सकती है। इसी तरह यह अणु जीव श्रीमती राधारानी की अंतरंगा शक्ति का बल प्राप्त करके महामाया (दुर्गा देवी) के जाल से छुटकारा पा सकता है, अन्यथा नहीं। हम साधकों को सर्वभाव से श्रीमती राधारानी की चित् शक्ति की शरण ग्रहण करनी होगी तभी माया को पार किया जा सकता है।

* * *

- 7 -

माया में फँसे हुये जीव की अवस्था

माया में फँसे हुये जीव की यह दशा होती है-

(i) उसे अपने नित्य स्वरूप का बोध नहीं होता।

(ii) उसमें झूठी आशायें होती हैं।

(iii) उसमें हृदय दुर्बलता होती है अर्थात् उसका दिल कमज़ोर होता है।

(iv) उससे नाम भगवान् के प्रति अपराध, भगवान् के भक्तों के प्रति अपराध, भगवान् की सेवा के प्रति अपराध होते हैं।

(i) उसे अपने नित्य स्वरूप का बोध नहीं होता

माया में फँसे हुये जीव को यह ज्ञान नहीं होता। वह भगवान् की तटस्था शक्ति का अंश है। शक्ति-शक्तिमान् की सेवा करती है इसलिये वह भी भगवान् का सेवक या नित्यदास है जो कि उसका स्वरूप धर्म है। उसमें अहंबुद्धि होती है। वह शरीर को ही आत्मा मानता है। जैसे मैं पुरुष हूँ, मैं राजा हूँ, मैं भिखारी हूँ, मैं धनी हूँ इत्यादि। वास्तव में जीव शरीर न हो कर शरीरी है जिसके शरीर में रहने से ही शरीर पिता है, माता है, भाई है और बहिन है इत्यादि। यदि शरीर ही पिता होता तो उसे कभी भी जलाया या दफ़नाया न जाता। इसलिये शरीर पिता नहीं है। जिसके स्थित होने से शरीर पिता है, माता है, भाई है, बहिन है वह ही जीव आत्मा है। जोकि चेतन है। यह जीवात्मा जिसके शरीर में प्रवेश करती है उसे भी चेतन कर देती है। उसी को यथार्थ जानना ही अपने नित्य स्वरूप का बोध है। माया में फँसे हुये जीव को यह बोध नहीं होता कि वह भगवान् श्री कृष्ण का नित्य दास है।

(ii) उसमें झूठी आशायें होती हैं

जिस वस्तु की उपज है, स्थिति है, विनाश है, वह त्रिगुणमयी माया की वस्तु है। रजोगुण से उपज, सत्तोगुण से स्थिति और तमोगुण से विनाश है। रजोगुण की पालना ब्रह्मा जी करते हैं और सतोगुण की पालना विष्णु भगवान् करते हैं और तमोगुण की पालना महादेव जी करते हैं। इसी तरह जितने जीव हैं उनके शरीर नाशवान् हैं। इस नश्वर शरीर के लिये जो मांग है, वह भी नाशवान् है। माया में फँसे हुये जीव अपने शरीर में लिप्त हैं इसलिये उनकी मांग भी शरीर सम्बन्धी वस्तुओं को प्राप्त करने की है। यह सब झूठी आशा-तृष्णाएँ हैं। सत्त वस्तु-भगवान् के लिए उनकी मांग नहीं है। माया में फँसे हुये जीव को इस चीज का बोध नहीं है कि वह स्वरूप में आत्मा है और भगवान् से विमुख होकर उसे यह शरीर मिला है जिसको कभी दु:ख, कभी सुख, कभी जन्म और कभी मृत्यु आती है। पुत्र के लिये तृष्णा, स्त्री के लिये तृष्णा, मकान के लिये तृष्णा, मान प्रतिष्ठा के लिये तृष्णा आदि झूठी आशा-तृष्णा कहलाती है।

(iii) उसमें हृदय दुर्बलता (Weakness of Heart) होती है

जितना ही जीव माया के भोग की इच्छा करता है उतना ही वह मायिक संसार में फँस जाता है और उतना ही उसका दिल कमज़ोर हो जाता है। सांसारिक वस्तुओं की उपलब्धि करके जब वह उनके अनिष्ट के बारे में सोचता है तो उसे भय लगता है। इससे उस जीव का हृदय दुर्बल हो जाता है। दुर्बल हृदय वाला जीव भगवान् का भजन नहीं कर सकता है और न ही सत्संग कर सकता है। उसे हर समय संसार से भय लगता रहता है।

(iv) उससे अपराध होते रहते हैं

नाम भगवान् के प्रति अपराध, वैष्णव अपराध, सेवा अपराध, आदि अपराध की श्रेणी में आते हैं। जो कृष्ण नाम है वही साक्षात्

कृष्ण है – यह सभी शास्त्र बखान करते हैं। जीव के माया में फँसने का कारण उसकी भगवान् से विमुखता है। माया में फँसा हुआ जीव स्वरूप से ही भगवान् का अपराधी है। इसलिये मायाबद्ध जीव नामापराधी होगा। यदि जीव अपराधी न होता तो माया में कभी भी न फँसता।

इसलिये अपराधी जीव में छिपे हुय चारों अवगुण होंगे। सिर्फ एक ही नाम अपराध से जीव की यह दशा हुई है। जब तक मायाबद्ध जीव नाम भगवान् के प्रति किये अपराध का खण्डन नहीं करता या जब तक नाम अपराध को भगवान् से माफ नहीं करवाता उसमें स्वरूप भ्रम, झूठी आशा–तृष्णा, हृदय दुर्बलता, नाम अपराध आदि रहेंगें और वह जन्म–मृत्यु के अन्तर्गत सुख–दु:ख, शारीरिक कष्टों आदि को प्राप्त करता रहेगा इसे कोई नहीं रोक सकता।

'कृष्ण, कृष्ण' का उच्चारण करने वाली जो वाणी है, वही प्राणियों के कष्टों को दूर करने में पूर्णतः समर्थ है।

– 8 –

मलिन चित्त कैसे शांति लाभ कर सकता है

माया बद्ध जीव अनादि काल से (जब से माया में फँसा है) कर्म करता आ रहा है। कुछ पुण्य कर्म, कुछ पाप कर्म। इन अच्छे-बुरे कर्मों का रंग चित्त पर चढ़ रहा है। जितना कोई जीव विषयों में फँसा हुआ है उसका उतना ही चित्त मलीन (मैला) है। जब वह हरि नाम या भगवान् के ध्यान में बैठता है तो उसका मलीन चित्त इधर-उधर भागता है और एक पल के लिये भी वह स्थिर नहीं होता। मायाबद्ध जीव जब सत्संग के लिये जाता है तो पहले-पहले उसके मलीन चित्त में कुछ नहीं ठहरता। क्योंकि चित्त पर विषयों का रंग होता है। जब जीव लगातार सत्संग और महामन्त्र-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

का जाप करता है तो उसका चित्त साफ होने लगता है तथा उस पर हरिनाम का रंग चढ़ना शुरु हो जाता है तथा विषयों का रंग उतरना शुरु हो जाता है। जितने प्रतिशत चित्त साफ होता जाता है उतने ही प्रतिशत जीव का भगवान् में ध्यान लगना शुरु हो जाता है और उतने ही प्रतिशत उसका चित्त शांति लाभ करने लग जाता है।

निर्मल चित्त होने से प्रभु, जो जीव के साथ रहते हैं साक्षात् भाव से चित्त में प्रकाशित हो जाते हैं। जीव अपने प्रभु के साक्षात् दर्शन करके कृतार्थ हो जाता है और सदा रहने वाली शांति को प्राप्त कर लेता है। यही हालत मुक्त पुरुष की है। यही स्थिति मुनि की है।

* * *

– 9 –

साधन-भजन में निष्ठा

साधन-भजन साधक को पतिव्रता स्त्री की तरह करना होगा। जैसे पतिव्रता स्त्री अपने पतिदेव को ही अपना सब कुछ समझती है उसी तरह गुरुदेव से भगवान् के संबंध में ज्ञान प्राप्त करके पतिव्रता स्त्री की तरह भजन करना होगा। तभी निष्ठा बनेगी, अन्यथा नहीं। जैसे यदि किसी स्त्री में सभी प्राकृत गुण तो हों पर वह पतिपरायणा न होकर दूसरों के साथ अवैध संबंध रखती हो तो उसके सभी गुण सराहनीय न होंगे। इसी तरह साधक में यदि सभी गुण जैसे दयालु, क्षमा, सदाचारी, दानी इत्यादि हो मगर चित्त से अन्य देवी-देवताओं से संबंध रखता हो तो उसकी सेवा भी भगवान् ब्रजेन्द्रनंदन श्री कृष्ण स्वीकार नहीं करेंगे। इसलिये एकनिष्ठ होकर भजन करना होगा, नहीं तो करोड़ों वर्ष भी साधन करने से भगवद् प्राप्ति नहीं होगी। इसलिये नाम भगवान् का सहारा लेकर हर समय महामंत्र का जाप करना होगा –

कलियुग का महामंत्र

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

– 10 –

जीवों की उत्पत्ति

27.07.1979

जीव सूर्य की किरणों की तरह असंख्य हैं। जैसे सूर्य की किरणें सूर्य से निकलती हैं उसी प्रकार जीव भी महाविष्णु के मुख से निरंतर निकलते रहते हैं। सूर्य की सभी किरणें मिल कर भी सूर्य के समान नहीं हो सकतीं उसी तरह सभी जीव भी इकट्ठे मिल कर भगवान् महाविष्णु के समान नहीं हो सकते। किरणों की स्थिति सूर्य पर निर्भर करती है। किरणें सूर्य के बगैर नहीं रह सकतीं। सूर्य अकेले में रह सकता है। इसी प्रकार जीव भगवान् के बगैर नहीं रह सकता। भगवान् अकेले रह सकते हैं। महाप्रलय में सभी कुछ जो दृश्यामान जगत् में है, नष्ट हो जाता है। यहाँ तक कि ब्रह्मा जी भी अपने ब्रह्मांड के साथ नष्ट हो जाते हैं। सभी जीव भगवान् महाविष्णु के उदर (पेट) में चले जाते हैं। अकेले भगवान् और उनके चिन्मय धाम बचे रहते हैं। फिर जब सृष्टि रचने का समय आता है तब जीव मात्र अपने-अपने कर्मों के अनुसार भिन्न-भिन्न योनियों को प्राप्त करते हैं तथा इस प्रकार ब्रह्मांड की रचना होती है। यह भगवान् बृजेन्द्रनंदन श्रीकृष्ण की एक लीला है। भगवान् का इसमें कोई प्रयोजन नहीं है। जीवमात्र को, उनके अपने ही कर्मों का भुगतान कराने के लिये, यह लीला है।

मायाबद्ध जीव अपने कर्मों के अनुसार ही भटक रहा है। जब तक वह भगवान् से अपने किये हुये अपराध को खत्म नहीं कराता, वह भटकता ही रहेगा। भगवान् की शरण लेकर भगवान् से अपने

किये हुये अपराध को माफ करवा कर ही, जीव इस चक्कर से छुटकारा पा सकता है। सर्वदा इस महामंत्र का जाप करें तभी नाम भगवान् की कृपा प्राप्त होगी।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

– 11 –

भगवान् की महिमा

जीव मात्र भगवान् बृजेन्द्रनंदन श्रीकृष्ण की चिन्मय शक्ति का अंश है। एक बद्धजीव की महिमा को जान कर आप अनुमान लगा सकेंगे कि उस भगवान् की कितनी महिमा होगी जिसका यह अंश है। इसको इस उदाहरण से समझा सकता है कि पीपल के वृक्ष में गुलर के असंख्य बीज हैं। हर एक बीज को यदि सूक्ष्म रूप से देखें तो हर एक बीज पीपल है। इसलिये आप अनुमान लगायें कि एक पीपल का वृक्ष कितने पीपलों को सहारा दे रहा है। इसी प्रकार भगवान् बृजेन्द्रनंदन श्रीकृष्ण जो सभी जीव मात्र के प्रभु हैं, उनकी महिमा कितनी होगी? इसका अनुमान बद्धजीव की सीमित बुद्धि नहीं लगा सकती। एकमात्र उस प्रभु की इच्छा से ही इसका अनुमान लगाया जा सकता है। मायाबद्ध जीव जो हर समय अपनी इन्द्रियों की तृप्ति करने में ही लगा हुआ है, प्रभु की महिमा जानते हुये भी अपने प्रभु का गुणगान नहीं करता है। यह बद्धजीव के फूटे हुये भाग्य की निशानी है। जो अपने प्रभु के महान् गुणों की कीर्ति न गाकर हर समय अपनी ही कीर्ति गाने में लगा रहता है। साधक को

चाहिये कि भगवान् बृजेन्द्रनंदन श्रीकृष्ण के गुणों की ही सर्वदा कीर्ति (कीर्तन) का गान करे जो सभी के स्वामी हैं। इस के लिये सर्वदा इस महामंत्र का कीर्तन करना चाहिये :-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

- 12 -

माया से गठित शरीर, अणु चेतन जीव और परमात्मा

30.05.1979

माया के 24 तत्त्वों से यह शरीर बना हुआ है। यह 24 प्रकार के तत्त्व नीचे दिये जाते हैं।

पाँच महाभूत- पृथ्वी, जल, आग, वायु, आकाश।

पाँच तन्मात्राएँ- शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध।

पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ- आंख, कान, नाक, जिह्वा, चमड़ी।

पाँच कर्मेन्द्रियाँ- वाणी, हाथ, पैर, गुदा, पेट।

सूक्ष्म शरीर- मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार।

ये 24 तत्त्व प्राकृत जड़ तत्त्व हैं। इन 24 तत्त्वों से गठित शरीर में, जो अणुचेतन जीव वास करता है, वह 25वाँ तत्त्व है। अन्तर्यामी परमात्मा ईश्वर ही 26वें तत्त्व हैं। माया से गठित शरीर 24 तत्त्वों के शरीर में जब जीव प्रवेश करता है तभी सारे तत्त्व काम करना शुरू कर देते हैं। जब अणुचेतन (जीवात्मा) शरीर छोड़ देता है तब शरीर कोई काम नहीं कर सकता। उसे मुर्दा शरीर कहते हैं। अणुचेतन

(जीव) जब तक शरीर में रहता है तभी पिता-पिता है, माता-माता है इत्यादि। शरीर पिता नहीं है यदि शरीर पिता ही होता तो उसे कभी जलाया न जाता, दफनाया न जाता इत्यादि। इसलिये अणु चेतन जीव (जीवात्मा) के रहने से ही पिता, पिता है और माता, माता है।

26वाँ तत्त्व जो परमात्मा है, वह जीव के साथ रहता है, उसे ही अन्तर्यामी ईश्वर भी कहते हैं। जीव अपने किये हुए कर्मों का फल भोगता है और ईश्वर फलदाता है। अणु चेतन जीव कर्म करने में आजाद है और उस के कर्मों का फल ईश्वर ही देते हैं।

द्वात्रिंशदक्षरं मन्त्रं नामषोडशकान्वितम्।
प्रजपन् वैष्णवो नित्यं राधाकृष्णस्थलं लभेत्।।

(पद्मपुराण)

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

उपरोक्त सोलह नामों से युक्त बत्तीस अक्षरों वाले 'हरे कृष्ण' 'महामन्त्र' को नित्य जप करने वाला वैष्णव, श्रीराधाकृष्ण के गोलोक धाम को प्राप्त कर लेता है।

– 13 –

माया में फँसे हुए जीवों की स्थितियाँ

माया में फँसे हुए जीवों की पाँच स्थितियाँ हैं।

1. आच्छादित चेतन
2. संकुचित चेतन
3. मुकुलित चेतन
4. विकसित चेतन
5. पूर्ण विकसित चेतन

1. आच्छादित चेतन– जीव कृष्णदासता को भूल कर माया के गुणों (रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण) में इतने गहरे चले जाते हैं कि उनका चिद्धर्म (इच्छा, क्रिया, अनुभूति) तकरीबन खत्म हो जाते हैं। जैसे वृक्ष, बेल, घास, पत्थर इत्यादि। सिर्फ छः विकारों (जन्म, हालत, बढ़ना, परिणाम, क्षय और विनाश) द्वारा इनके चिद्धर्म की पहचान नाममात्र की होती है। यह अपराधी जीव के गिरावट की हद है जैसे अहिल्या, यमलार्जुन इत्यादि। किसी खास अपराध होने पर ही वैसी गति प्राप्त होती है। भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा से ही उस हालत से छुटकारा मिलता है।

2. संकुचित चेतन– पशु, पक्षी, सर्प, मछली, जल-जन्तु, कीट- पतंगे ये संकुचित चेतन हैं। संकुचित चेतन की चेतनता कुछ अंशो में महसूस होती है। खाना, निद्रा, डर, इच्छानुसार घूमना, अपना हक जानकर दूसरों से लड़ाई-झगड़ा करना, क्रोध करना यह सब सकुंचित चेतन में पाया जाता है। इनमें सिर्फ परलोक का ज्ञान नहीं होता। बंदरों में विज्ञान विचार भी देखा जाता है। इतना होने पर

उनमें भी ईश्वर जिज्ञासा नहीं होती। इनका चेतन धर्म संकुचित होता है। भरत महाराज को हिरण का शरीर लेकर भी भगवान के नाम का ज्ञान था। किंतु यह साधारण विधि नहीं है। भगवान् की कृपा से अपराध खत्म होने से ही सद्गति होती है।

3. मुकुलित चेतन– मानव जाति को साधारणत: पाँच हिस्सों में बाँटा जा सकता है

(i) नीति के बगैर मनुष्य।

(ii) ईश्वर और नीति को न मानने वाले।

(iii) ईश्वर और नीति को मानने वाले।

(iv) साधन भक्त मनुष्य।

(v) भाव भक्त मनुष्य।

4. विकसित चेतन– नीति के साथ ईश्वर का थोड़ा सा विश्वास होने पर मनुष्य साधन करने लग जाता है उसे विकसित चेतन कहा जाता है।

5. पूर्ण विकसित चेतन– जिसका ईश्वर के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया हो उस मानव को भाव भक्त कहते हैं। भाव भक्त मनुष्य पूर्ण विकसित चेतन हैं।

* * *

– 14 –

मायाबद्ध जीव के ऋण

31.05.1979

देवर्षि-भूताप्त नृणां पितृणां न किंकरो नायमृणी च राजन्।
सर्वात्मना यः शरणं शरण्यं गतो मुकुन्दं परिहृत्य कर्तुम्।।

–श्रीमद्भागवत

जो सब प्रकार से, शरणागतवत्सल भगवान् मुकुन्द की शरण में आ गया है, वह देवताओं, पितरों, प्राणियों, कुटुम्बियों और अतिथियों के ऋण से मुक्त हो जाता है, वह किसी के अधीन या किसी का सेवक नहीं रहता।

* * *

– 15 –

भगवान् की भक्ति या सेवा

माया के 24 तत्त्वों से गठित यह शरीर नाशवान् है। इसलिये शरीर संबंधी जितने धर्म हैं या कर्म हैं, सभी नाशवान् हैं। इस शरीर में 25वाँ तत्त्व जीव है। जिसके रहते यह शरीर सभी कार्य करता है, यह जीव अविनाशी है अर्थात् नाशवान् नहीं है।

जीव भगवान् श्रीकृष्ण की तटस्था शक्ति का अंश है। शक्ति शक्तिमान की सेवा करती है इसलिये जीव भगवान् का, स्वरूप से ही सेवक है। जीव की भगवान् के प्रति की हुई सेवा कभी नष्ट नहीं होती। सेवा का दूसरा नाम भक्ति है। शास्त्र के अनुकूल सेवा ही भक्ति है। भगवान् की सेवा से चित्त जितना साफ हो जाता है उतने

प्रतिशत चित्त निर्मल हो जाता है, अगले जन्म में चित्त उससे आगे साफ होना शुरु हो जाता है। परन्तु प्राकृतिक ज्ञान (संसार का ज्ञान) मृत्यु होने पर खत्म हो जाता है। कर्म से बँधा हुआ जीव जब फिर जन्म ग्रहण करता है तो फिर से उसे ज्ञान सीखना पढ़ता है। इसलिये कल्याण चाहने वाले जीव को सांसारिक ज्ञान, जीविका (रोजी रोटी) कमाने तक ही रखना चाहिये। उसे व्यर्थ में समय नष्ट नहीं करना चाहिये और भगवान् की सेवा में समय लगाना चाहिये।

भगवान् की भक्ति या सेवा मानव जीवन में ही की जा सकती है किसी और योनि में नहीं। मनुष्य जीवन में यदि जीव भगवान् की भक्ति या सेवा नहीं करता तो उसका जीवन किसी जानवर से कम नहीं है क्योंकि वह भी वही क्रिया करता है जो जानवर करता है। मनुष्य भी सोता है, जानवर भी सोता है। मनुष्य भी खाता है, जानवर भी खाता है। मनुष्य भी बच्चे पैदा करता है, जानवर भी बच्चे पैदा करता है। मनुष्य भी अपना बचाव करता है, जानवर भी अपना बचाव करता है। सिर्फ मनुष्य और जानवर में यही फर्क है कि मनुष्य में ईश्वर जिज्ञासा है, जानवर में नहीं। यदि फिर भी मनुष्य भगवान् की सेवा नहीं करता तो वह जानवर के बराबर ही है और वह कर्म से बँधा हुआ नाना योनियों में भ्रमण करता रहता है।

* * *

भगवान् में व उनके साधु-भक्तों में प्रीति हो जाने से हमारी दुनियादारी की सारी आसक्ति खत्म हो जाएगी और उस आसक्ति के साथ-साथ ही हमारा मोह, अज्ञान, दुख व नरक का भय सब खत्म हो जाएगा तथा हम भी भगवान् के उन्नत-उज्ज्वल रस को प्राप्त कर सकेंगे।

(श्रील भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज)

- 16 -

माया के गुण

31.05.1979

भगवान् कृष्ण की बहिरंगा माया के तीन गुण हैं-

1. सत्त्वगुण 2. रजोगुण 3. तमोगुण

मायाबद्ध जीव को माया के तीन गुणों से विभाजित किया जाता है। जिन जीवों में सत्त्वगुण की प्रधानता होगी, वे जीव देवयोनि को प्राप्त करते हैं। जिन जीवों में रजोगुण की प्रधानता होगी, वे जीव मनुष्य योनि को प्राप्त करते हैं और जिन जीवों में तमोगुण की प्रधानता होगी, वे जीव नरक योनि जैसे पशु, पक्षी, साँप इत्यादि को प्राप्त होते हैं। अनादि काल से माया में फँसे हुए जीव इस संसार में कभी देव योनि में, कभी मनुष्य योनी में, कभी पशु आदि नाना योनियों में भ्रमण कर रहे हैं। इस संसार रूपी वृक्ष की डाली पर जीव कभी इस डाली पर और कभी उस डाली पर भटक रहा है। वह अच्छे और बुरे कर्म करता आ रहा है। जिनका रंग जीव के चित्त पर चढ़ रहा है। इस प्रकार जीव का चित्त, जो शीशे की तरह साफ होता है, मैला होता जाता है और वह अपने स्वरूप धर्म (नित्य कृष्णदासता) को भूल जाता है। यह जीव जो सत्, चित्त, आनंद स्वरूप है, माया के तीन गुणों से बद्ध हो गया है। निर्गुण संग से ही वह जीव अपनी वास्तविक (Original) हालत में आ सकता है। भगवान् श्री कृष्ण के नाम, गुण, लीला इत्यादि का गान भक्त-संग में करने से ही जीव अपनी असली हालत में आ सकता है।

कृष्ण नाम, कृष्ण गुण, कृष्णलीला वृन्द ।
कृष्णेर स्वरूप सम सब चिदानन्द।।

* * *

- 17 -
साधु वैद्य की आवश्यकता

02.06.1979

भ्रमिते भ्रमिते यदि साधु वैद्य पाय।
तार उपदेश मन्त्रे पिशाची पिलाय।
कृष्ण भक्ति पाय तवे कृष्ण निकट जाय ।

जीव को जो सबसे बड़ी बीमारी लगी हुई है वह जन्म और मृत्यु की है। बाकी जितनी बीमारियाँ हैं सब की सब इस बीमारी के अधीन हैं। दूसरी बीमारियों की देख-रेख कविराज वैद्य या डाक्टर करते हैं। परंतु जन्म-मृत्यु की बीमारी का इलाज साधु वैद्य ही कर सकते हैं। साधु से मतलब वह मनुष्य जिसकी सत्-वस्तु-भगवान् श्रीकृष्ण, राम, नारायण इत्यादि में प्रीति हो। वह गृहस्थी, त्यागी अथवा सन्यासी कोई भी हो सकता है। वह ही इस जन्म-मृत्यु की बीमारी का इलाज कर सकता है। जन्म-मृत्यु की बीमारी जीव को इसलिये लगी है क्योंकि जीव ने भगवान् श्री कृष्णचन्द्र से मुख मोड़ कर माया का भोग करना चाहा था। इससे माया (पिशाची चुड़ैल) ने जीव को अपने पंजे में ले लिया है। साधु वैद्य मायाबद्ध जीव को कृष्ण मंत्र देते हैं जिससे वह फिर से अपनी असली हालत में आकर कृष्ण भक्ति करता है और माया के पंजे से मुक्त हो जाता है। अर्थात् जीव की जन्म-मृत्यु की बिमारी मूल रूप से नष्ट हो जाती है। इसलिये जीव मात्र को चाहिये कि अपनी जन्म-मृत्यु की बीमारी का इलाज करे, तभी वह दूसरी बीमारियों से राहत पा सकता है, अन्यथा नहीं।

जब जीव ने भगवान् श्री कृष्णचन्द्र से मुख मोड़ कर माया का भोग करने की इच्छा की तो इसे माया ने दो शरीर-एक स्थूल तथा दूसरा सूक्ष्म (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) दिये। जिससे वह अनादि काल से अच्छे-बुरे कार्य करता आ रहा है। उसी कार्य से बँधा हुआ जीव कभी देवयोनि, कभी मनुष्य योनि, कभी पशु-पक्षी आदि योनियों में भटक रहा है और बार-बार जन्म-मृत्यु को प्राप्त हो रहा है। जब जीव का माया से छूटने का समय आता है तो उसे साधु वैद्य का संग प्राप्त होता है जिनसे वह कृष्ण-मंत्र लेकर बार-बार जन्म-मृत्यु के फँदे से हमेशा-हमेशा के लिये छुटकारा पा लेता है और कृष्ण-सेवा या भक्ति प्राप्त करके भगवान् श्री कृष्णचन्द्र के निकट वास करता है। इसलिये हे जीव! हमेशा इस महामंत्र का जाप (कीर्तन) करो :-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

इस महामंत्र का कीर्तन करने में कोई देश, काल, पात्र का नियम नहीं है।

खाईते सोइते यथा तथा नाम लय।
काल देश नियम नाहीं सर्व सिद्धि हय।।

खाते समय, सोते समय, जिस तरह भी हो, नाम का कीर्तन करें, इसमें समय का, देश का कोई नियम नहीं है । यहाँ-वहाँ कहीं भी नाम कीर्तन किया जा सकता है। यह कीर्तन सब तरह की इच्छाएँ पूर्ण करता है।

* * *

– 18 –

संचित, क्रियमाण और प्रारब्ध कर्म

02.06.1979

कर्म तीन तरह का होता है ।

(i) संचित कर्म

(ii) क्रियमाण कर्म

(iii) प्रारब्ध कर्म

(i) **संचित कर्म :** अनादि काल से माया में फँसा जीव जो कर्म करता आ रहा है। वे कर्म जमा हो रहे हैं। उन्हें संचित कर्म कहते हैं।

(ii) **क्रियमाण कर्म :** जो कर्म जीव अब कर रहा है वह क्रियामान कर्म हैं। वह भी संचित कर्म में जमा हो रहे हैं।

(iii) **प्रारब्ध कर्म :** जिन कर्मों का फल जीव अब भोग रहा है, वह प्रारब्ध कर्म हैं।

इन कर्मों से बन्धा हुआ जीव बार-बार जन्म-मृत्यु को प्राप्त हो रहा है। हम किसी को भी हमेशा के लिये अपने साथ नहीं रख सकते। भगवान् श्रीकृष्ण सबके कर्ता हैं हम उनके किसी कार्य में नुकताचीनी नहीं कर सकते।

ऊपर दिये हुये कर्मों का मल (गंदगी) जीव के चित्त पर चढ़ता रहता है। जब तक यह मल पूर्ण रूप से धुल नहीं जाता, जीव कर्म बंधन से मुक्त नहीं हो सकता।

चित्त कैसे निर्मल होगा?

1. कर्म द्वारा कर्म की मैल साफ नहीं हो सकती, चित्त निर्मल नहीं हो सकता।

2. ज्ञान द्वारा भी चित्त निर्मल नहीं हो सकता। ज्ञानी यह कहता है कि जीव ही ब्रह्म है। इसलिये ज्ञानी जीव के असली धर्म नित्य दासता को नहीं मानता है। अब प्रश्न ये उठता है कि जीव का चित्त निर्मल कैसे होगा?

3. श्रीकृष्ण के नामों का कीर्तन या महामंत्र कीर्तन ही चित्त को निर्मल बना सकता है। तभी जीव कर्म बंधन से छुटकारा पा सकता है। जन्म-मृत्यु जो कि कर्म बंधन के कारण ही जीव के पीछे लगी हुई है। श्री कृष्ण कीर्तन करके ही इससे छुटकारा पा सकता है।

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्नि-निर्वापणं,
श्रेयःकैरवचन्द्रिका वितरणं विद्यावधू-जीवनम्।
आनन्दाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं,
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्ण-संकीर्तनम्।।

श्रीमन्महाप्रभु ने परम उपाय श्रीकृष्ण नाम संकीर्तन की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है कि श्री कृष्ण नाम संकीर्तन जीव के चित्तरूपी दर्पण को मार्जन करने वाला है, संसार-त्रितापरूप महा दावानल को बुझाने वाला है, सर्व मंगल रूप कुमुद पुष्प के लिये ज्योत्सना वितरण करने वाला है, विद्यारूप वधू का प्राण स्वरूप है और आनन्द सागर की वृद्धि करने वाला है। इसके प्रतिपद में ही पूर्णामृत का आस्वादन है। यह सर्व इन्द्रियों की तृप्ति विधान करने वाला है। श्री कृष्ण नाम संकीर्तन इस प्रकार सर्वोत्कर्ष से विजययुक्त होकर विराजमान है। इसलिये सदा श्री हरि के नामों का कीर्तन करें-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

।। कीर्तनीय सदा हरिः।।

***

– 19 –

कर्मयोग

02.06.1979

श्रीमद् भगवद् गीता में श्रीकृष्ण चन्द्र महाराज जी ने जो कर्म के बारे में कहा है, वह निष्काम कर्म के बारे में कहा है। निष्काम कर्म कब होगा ? जब चित्त निर्मल होगा क्योंकि निर्मल चित्त में कर्म के फल की चाह नहीं होगी। निर्मल चित्त तभी होगा जब कृष्ण नाम या महामंत्र कीर्तन होगा।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

इसलिये 10 तरह के नाम अपराधों को छोड़कर हमेशा महामंत्र कीर्तन करना चाहिये।

* * *

– 20 –

मन की अवस्था

मन एक लोहे की जंजीर के समान है जो जड़ शरीर और चेतन जीव को बंधन में रखता है। जिसका चित्त जितना माया में फँसा होगा उतना ही उसका बंधन गाढ़ा होगा। जितना किसी जीव का चित्त भगवान् श्री कृष्ण चन्द्र की तरफ होगा उसका उतना ही बंधन ढीला होगा। जिसका चित्त पूर्ण रूप से भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र में लगा होगा उसका कोई बंधन नहीं होगा। चित्त भगवान् में तभी लगेगा, जब तन, मन, धन की ऊर्जा (Energy) भगवान् की तरफ

होगी। जहाँ किसी की ऊर्जा जाएगी, वहीं प्यार होगा। अब हमारी ऊर्जा संसार की तरफ है इसलिये संसार से प्यार है। जब भगवान् की तरफ ऊर्जा जानी शुरु होगी तब भगवान् से प्रीति होनी शुरु हो जायेगी। इसलिये हमें अपनी ऊर्जा भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र को देनी चाहिये तभी कल्याण होगा।

* * *

– 21–

भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र की सेवा से सब की सेवा

अनन्तकोटि ब्रह्मांडो में अनन्त कोटि देवी–देवता, मानव और नरक में रहने वाले जीव वास करते हैं। यह सब भगवान् श्रीकृष्ण की त्रिगुणमयी माया का पसारा है। सभी देवी–देवता, मानव, पशु–पक्षी, कीड़े, साँप इत्यादि माया के तीन गुणों से बँधे हुये हैं। हर एक ब्रह्मांड में ब्रह्मा जी, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, दुर्गा देवी, महादेव, वैष्णो देवी, वायु देवता इत्यादि हैं। यह सभी भगवान् श्रीकृष्ण के सेवक हैं। भगवान् श्रीकृष्ण सबके मूल कारण हैं। ब्रह्मसंहिता में लिखा है–

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्द विग्रहः।
अनादिरादिर्गोविन्द सर्वकारण कारणम्।।

जीवमात्र एवं सभी देवी–देवताओं की सत्ता भगवान् श्रीकृष्ण पर निर्भर करती है। भगवान् श्रीकृष्ण इस संसार रूपी वृक्ष की जड़ हैं। यदि वृक्ष की जड़ को पानी से सींचा जाए तो वृक्ष के सभी अंगों अर्थात् शाखा, फल, फूल, तना आदि को पानी मिल जाता है। वैसे ही पेट में अन्न देने से शरीर के सभी अंगों में ताकत आ जाती है। अलग से शरीर के अंग हाथ, पैर, आदि को रोटी नहीं देनी पड़ती।

इसी प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र की सेवा करने से सभी देवी-देवता, मानव, पशु-पक्षी, आदि की सेवा हो जाती है। अलग से किसी देवी-देवता, मानव आदि की सेवा करने की जरूरत नहीं है। जो किसी एक देवता की उपासना करता है उससे वह सिर्फ एक देवता ही खुश होगा। दूसरे देवी-देवता खुश नहीं होंगे। परंतु जो भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र की उपासना करता है वह एक ही बार में अनंतकोटि ब्रह्मांडों के, अनंत कोटि देवी-देवताओं की उपासना कर लेता है। इसलिये भगवान् श्रीकृष्ण की उपासना करना सर्वोत्तम् है। फिर भी मायाबद्ध जीव ऐसा नहीं करता है। अपने स्वार्थ में अंधा हुआ वह इस बारे में बिल्कुल ध्यान नहीं देता और भगवान् की थोड़ी सी सेवा के बदले में बहुत बड़ी-बड़ी वस्तु मांगता है। यहाँ तक की उस देवी-देवता को भी ठगने की कोशिश करता है। उसे यह ज्ञान भी नहीं है कि जो कुछ उसे मिलता है उसके अपने ही कर्मों का फल है।

भगवान् की इच्छा के बगैर पत्ता भी नहीं हिल सकता। (Not even a blade of grass can move without the will of Supreme Lord Shri Krishna.) यह सब जानते हुये भी जीव इसे अपने जीवन में नहीं उतार सकता है क्योंकि उसको भगवान् श्रीकृष्ण की सत्ता का बोध ही नहीं है। भगवान् श्रीकृष्ण की सत्ता का बोध सत्संग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। सत्संग में जब जीव भगवान् के नाम, गुण, लीला आदि के बारे में सुनेगा और संकीर्तन करेगा, तब चित्त निर्मल होगा। निर्मल चित्त में ही भगवान् की सत्ता का प्रकाश होगा। तभी जीव को ऐसा बोध होगा कि भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा से ही सब देवी-देवता, जीव मात्र की सेवा हो जाती है। यही श्रद्धा है जिससे जीव भजन करते-करते भगवान् श्रीकृष्ण की सेवावृति प्राप्त करके इस माया के संसार (जो कि अंधे कुंए के समान है) को पार करके, भगवान् श्रीकृष्ण के नित्य धाम में

भगवान् की साक्षात् सेवा को प्राप्त करके कृतार्थ हो सकता है। इसलिये जीव को चाहिये कि सत्संग लाभ करे और हमेशा इस महामंत्र का जाप करे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

- 22 -

भगवान् को अर्पित वस्तु पूजनीय बन जाती है

भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र तुलसी दल के बगैर किसी भी वस्तु को स्वीकार नहीं करते। भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र अपने अनन्य भक्त की दी हुई वस्तु को ही स्वीकार करते हैं। जो वस्तु भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र के अनन्य भक्त द्वारा भगवान् को अर्पण की जाती है वह परम पूजनीय हो जाती है चाहे वह पानी ही क्यों न हो? उसे फिर पानी न कहकर चरणामृत कहते हैं। जिस जीव को ऐसा बोध होगा कि भगवान् को अर्पण करने से पानी पवित्र हो गया है वही उसकी महिमा को जानेगा, दूसरा नहीं। इसी प्रकार किसी बद्धजीव को भगवान् श्रीकृष्ण का कोई अनन्य भक्त, जब गले में तुलसी की माला (कंठी) डाल कर भगवान् को अर्पण करता है तभी उस बद्धजीव को भगवान् स्वीकार करते हैं। इसलिये बद्धजीव न तो खुद भगवान् की शरण ग्रहण कर सकता है और न ही भगवान् श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त के बगैर, उसे कोई भगवान् को स्वीकार करवा सकता है। जब उस बद्ध जीव को भगवान् स्वीकार कर लेते हैं तो वह मनुष्य, देवी-देवता इत्यादि के लिये पूजनीय बन जाता है।

वह उसे हरि का जन स्वीकार करते हैं और उस जीव को कोई कष्ट नहीं पहुँचाते हैं। यहाँ तक कि जिसके गले में तुलसी की माला हो, उसके निकट भूत, प्रेत इत्यादि नहीं आते हैं। मृत्यु होने पर उस जीव के निकट यमदूत तक नहीं आते हैं। उन्हें यह बोध होता है कि यह हरि का सेवक है। जो दूसरे जीव हैं उनको कर्मों के अनुसार सजा देने के लिये यमदूत हर समय तैयार रहते हैं। उदाहरण के तौर पर जिस कुत्ते के गले मे पट्टा होता है उसे पालतू जानकर कोई कुछ नहीं कहता है। परंतु दूसरे कुत्तों को हर कोई मारने की कोशिश करता है। इसी प्रकार जिसके गले में तुलसी की माला होती है उसे भगवान् श्रीकृष्ण का सेवक जानकर यमदूत तक कुछ नहीं कहते। पर दूसरों पर जब समय मिलता है भूत, प्रेत, यम इत्यादि हमला कर देते हैं। इसलिये भगवान् के भक्त को, जो भक्ति के मार्ग पर चल रहा हो, कंठ में तुलसी माला डालनी चाहिये क्योंकि श्रीभगवान् की प्रसादी तुलसी माला को डालकर, जो भगवान् की अर्चना पूजा की जाती है या और कोई शुभ कार्य किया जाता है, उसका अनंत गुणा फल मिलता है। श्री हरिभक्ति विलास में लिखा है :

निर्माल्य तुलसीमाला युत्कोयश्चार्चयेद्धरिम्।
यद् यत् करोति तत्सर्वमनन्त फलदं भवेत्।।

(श्रीहरिभक्ति विलास)

इसके विपरीत, जो लोग तुलसी कंठी का क्या लाभ है? इसे क्यों धारण किया जाए? ऐसा तर्क करते हैं और धारण नहीं करते हैं, उन पाप बुद्धि वाले लोगों के सभी शुभकर्म निष्फल हो जाते हैं और वे श्रीभगवान् की क्रोधाग्नि में जल कर नरक में जाते हैं और उनका उद्धार नहीं होता है।

* * *

– 23 –

माया में फँसा हुआ जीव किस तरह से भगवान को प्राप्त कर सकता है ?

जीव जिस कारण से माया में फँसा, उस कारण को दूर करने से ही माया के फँदे से छूट सकता है। दूसरे साधनों द्वारा वह माया से नहीं छूट सकता। जीव ने भगवान् की तरफ से मुख मोड़ कर माया को भोग करने की इच्छा की और उसी में फँस गया। यही जीव का माया में फँसने का कारण है। जब तक वह माया से मुख मोड़ कर भगवान् की तरफ मुख नहीं करता, तब तक माया के फँदे में ही रहेगा। कोई भी दूसरा साधन उसे माया से छुटकारा नहीं दिला सकता। माया से जीव अपनी ताकत से नहीं छूट सकता। भगवान् श्रीकृष्णचंद्र ने गीता में कहा है –

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।।

(श्रीमद् भगवद्गीता 7.14)

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं, ''मेरी तीन गुणों वाली माया बहुत दुस्तर है। आप खुद ही अनुमान लगा सकते हैं कि जिस माया को स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण चंद्र ही दुस्तर कह रहे हैं वह अणु जीव के लिये कितनी दुस्तर होगी? परंतु जो श्रीकृष्ण चंद्र महाराज की शरण में आ जाता है, वह माया को पार कर लेता है। अब सवाल यह है कि कैसे भगवान् की शरण में आया जाए?

****

- 24 -

भगवान् की शरण कैसे ग्रहण की जाय?

मायाबद्ध जीव अपनी ताकत से भगवान् की शरण में नहीं आ सकता। सिर्फ भगवान् की कृपा या भगवान् के अनन्य भक्त की कृपा से ही भगवान् की शरण ग्रहण की जा सकती है। भगवान् की कृपा हमेशा भक्त की कृपा के पीछे चलती है। इसलिये भगवान् से यही प्रार्थना करनी होगी कि वह कृपा करके अनन्य भक्त का संग दिलाये। भगवान् कृपा करके उस बद्धजीव को अनन्य भक्त का संग करा देंगे। तब वह जीव उस भक्त को गुरु रूप में अपनाये, गुरुदेव कृपा करके उसको भगवान् के पास अर्पण कर देंगे, तभी भगवान् उस जीव को अपनी शरण में ले लेंगे। गुरुदेव उस जीव को भगवान् के साथ उसका संबंध जतला देगें और उस संबंध को पक्का करने के लिये साधन बतला देंगे। अब प्रश्न यह पैदा होता है कि गुरुदेव के क्या लक्षण होने चाहियें।

गुरुदेव के लक्षण

1. गुरुदेव भगवान् श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त होने चाहियें। अनन्य का मतलब और किसी देवी-देवता के भक्त न होकर, केवल भगवान् के ही भक्त होने चाहिए। जैसे मीरा बाई, हनुमान जी इत्यादि।

2. भगवान्, भक्त, भागवत् की सेवा-भक्ति ही उनका जीवन होना चाहिये न कि जीविका (रोटी का धंधा)।

3. गुरुदेव आचार्य होने चाहियें । खुद आचरण करके दूसरों को शिक्षा देने वाले होने चाहिये न कि यह कहने वाले होने चाहिये

(Don't follow me, follow my lecture) कि जो कुछ मैं कहता हूँ, उस पर ध्यान दो। जो मैं करता हूँ , उस पर ध्यान न दो।

4. गुरुदेव शास्त्र युक्तियों में निपुण होने चाहियें। शिष्य का हर संदेह दूर करने में समर्थ होने चाहियें।

5. उन्हें भगवान् के तत्त्व का पूरा बोध होना चाहिये। चैतन्य चरितामृत में लिखा है कि गुरुदेव वही होने चाहियें जो कृष्ण तत्त्ववेता हों। चाहे वह ब्राह्मण, सन्यासी अथवा शूद्र ही क्यों न हो।

किवा विप्र, किवा न्यासी, शूद्र केने नय ।
जेई कृष्ण तत्त्ववेत्ता सेई गुरु हय ।।

ऐसे श्री गुरुदेव की शरण ग्रहण करें। गुरुदेव उस बद्धजीव को भजन की विधि बतायेंगे। गुरुदेव की बताई विधि के मुताबिक सन्ध्या वंदना करें। माला में नाम संकीर्तन करें-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

इसके साथ दस तरह के नाम-भगवान् के प्रति अपराध (नामापराध) जो कि बद्धजीव में स्वरूप से ही हैं, को छोड़कर भजन करें। ऐसा भक्त बहुत जल्दी भगवान् की प्राप्ति लाभ कर सकता है।

***

जो कलि में प्रतिदिन जागते और सोते समय 'कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण!' का कीर्तन करता है, वह भवसागर से पार हो जाता है।

-भक्त प्रह्लाद

– 25 –

नाम के प्रति अपराध

नामापराध दस तरह के हैं –

1. साधु निन्दा।

जिन साधुओं ने कर्म, धर्म, ज्ञान, योग तपस्या आदि को छोड़कर केवल भगवान् के नाम का सहारा ले रखा है, उनकी निन्दा करना बहुत बड़ा अपराध है। जो लोग इस जगत् में नाम की महिमा का प्रचार करते हैं, नाम–भगवान् उनकी निन्दा कैसे सहन कर सकते हैं? नाम का सहारा लेने वालों की निन्दा नहीं करनी चाहिये। उनको साधु मान कर संग करना चाहिये। उनके संग में रह कर हरिनाम कीर्तन करना चाहिये। बहुत जल्दी नाम की कृपा मिल जायेगी।

2. सदाशिव आदि देवताओं को श्रीविष्णु से पृथक् (Separate) ईश्वर मानना।

इससे ईश्वरवाद का बहुत बड़ा दोष आ जाता है और भगवान् की अनन्य भक्ति में बाधा पड़ जाती है। इसलिये यह सोच कर कि श्रीकृष्ण ही सर्वेश्वर हैं और उनकी शक्ति से ही शिव आदि देवताओं का ईश्वरत्त्व है। हरिनाम करने से नामापराध नहीं होता है। यह पहली व्याख्या है। दूसरी व्याख्या इस प्रकार है–सर्वमंगलमय श्री भगवान् के नाम, गुण, लीला आदि को भगवान् के नित्यसिद्ध विग्रह (मूर्ति) से पृथक मानने से भी नामापराध होता है।

श्री चैतन्य महाप्रभु जी ने कहा है :–

कृष्णनाम, कृष्णगुण, कृष्णलीलावृन्द ।
कृष्णेर स्वरूप सम सब चिदानन्द।।

चै.च. 2.17.130

कृष्णनाम, कृष्णगुण, कृष्णलीला सभी कृष्ण स्वरूप हैं। ऐसा ज्ञान और विज्ञान लाभ, हरि नाम करते हुये करना, नही तो अपराध हो जायेगा। इस प्रकार संबंध ज्ञान प्राप्त करके कृष्ण नाम करने की विधि है।

3. नाम तत्त्वविद गुरु को मरणशील और पाँच धातुओं से युक्त शरीर, साधारण मनुष्य मान कर उनकी अवज्ञा करना।

जो नाम तत्त्व की शिक्षा देते हैं, वे गुरु हैं उनके लिए अचला भक्ति रखना कर्त्तव्य है। जो लोग नामदाता-गुरु के प्रति यह भाव रखते हैं कि वे तो केवल नाम शास्त्र ही जानते हैं और जो दूसरे गुरु हैं, वे शास्त्रों के पंडित हैं वह अधिक अर्थ जानते हैं, उनकी बुद्धि अधिक है या वह अधिक पढ़े लिखे हैं, ऐसी धारणा वाले लोग नाम अपराधी हैं। नामदाता-गुरु से उत्तम कोई गुरु नहीं है। जो ऐसा नहीं मानते वे अपराधी हैं।

4. वेद-पुराण आदि शास्त्रों की निन्दा।

सभी वेदों-पुराणों में नाम की महिमा पायी जाती है। जिन मंत्रों में नाम की महिमा दी गई है, उनकी निन्दा करने से नाम अपराध होता है। कुछ लोग नाम-महिमा की अपेक्षा दूसरे उपदेशों का सम्मान अधिक करते हैं, वे नाम अपराधी हैं। नाम अपराधी की नाम में रुचि नहीं होती है।

5. हरिनाम में अर्थवाद।

शास्त्रों में ऐसा कहा गया है कि भगवान् नाम में भगवान् की पूर्ण शक्तियाँ है। नाम पूर्ण चिन्मय है। वह मायिक जगत् को ध्वंस

करने में समर्थ है। नाम की महिमा परम सत्य है। इन्हें सुनकर कर्मी और ज्ञानी लोग कर्म और ज्ञान की स्थापना करने के लिये अर्थवाद की कल्पना करते हैं। अर्थवाद का मतलब है कि शास्त्रों में जो नाम की महिमा गाई गई है, वह सिर्फ नाम में रुचि पैदा करने के लिये गाई गई है, पर असल में ऐसा नहीं है। जो ऐसा सोचते हैं वे नाम अपराधी हैं। जो अर्थवादी है उनका कभी संग नहीं करना चाहिये। श्रीचैतन्य महाप्रभु की शिक्षा है कि यदि अचानक कहीं पर तुम्हारी आँखों के सामने नामापराधी आ जाये तो सभी कपड़ों के साथ स्नान करना चाहिये।

6. भगवान् नाम को काल्पनिक समझना।

मायावादी, निर्विकार और नाम, रूप रहित ब्रह्म को परमतत्त्व मानते हैं। जो ऐसा मानते हैं कि ऋषियों ने अपने कार्यों की सिद्धि के लिये राम, कृष्ण आदि नामों की कल्पना की है, वे नाम अपराधी हैं। हरिनाम कल्पित नहीं है बल्कि नित्य और चिन्मय वस्तु है।

7. नाम के बल पर पाप कर्म करना।

जो लोग नाम के बल पर पाप कर्म करते हैं वे नामापराधी हैं। नाम में इतनी शक्ति है कि पाप, पाप बीज, पातक और महापातक-सब को जड़ से ध्वंस कर देता है। जो लोग यह सोचते हैं कि जब नाम की इतनी महिमा है तो अभी पाप कर लेते हैं, फिर बाद में नाम ले लेंगे, वे नाम अपराधी हैं। नाम के बल पर किया हुआ पाप, अपराध में बदल जाता है और ऐसे पाप, नाम अपराध की श्रेणी में आ जाने के कारण, नाम अपराध दूर करने के उपाय द्वारा ही नष्ट किये जा सकते हैं।

8. धर्म, व्रत, त्याग, होम आदि प्राकृत शुभ कर्मों को अप्राकृत भगवान् नाम के बराबर समझना।

हरिनाम के साथ किसी भी सत्कर्म की बराबरी नहीं की जा सकती। जो लोग सत्कर्मों को और हरिनाम को बराबर मानते हैं, वे नाम अपराधी हैं। यदि कोई सत्कर्मों से मिलने वाले फलों के लिये भी हरिनाम से प्रार्थना करते हैं तो भी वे नाम अपराधी हैं। क्योंकि वह सत्कर्मों और हरिनाम को बराबर मानते हैं या हरिनाम की सत्कर्मों के साथ समान बुद्धि हो जाती है। सभी शुभ कर्म जड़ धर्म के अन्तर्गत हैं, प्राकृत हैं। शुभ कर्मों से पुण्य होता है। पुण्य से स्वर्ग प्राप्ति होती है। जब तक पुण्य की अवधि रहती है, शुभकर्मी जीव स्वर्ग में रहता है। जब पुण्य खत्म हो जाते हैं फिर मृत्यु लोक में धकेल दिया जाता है। शुभ कर्म से भवबंधन नष्ट नहीं होता। जन्म-मृत्यु की बीमारी शुभकर्मी जीव को लगी ही रहती है। जबकि हरिनाम से जीव की जन्म-मृत्यु की बीमारी खत्म हो जाती है। इसलिये शुभ कर्म हरिनाम के तुल्य नहीं हो सकते। स्कन्द पुराण में ऐसा लिखा है-

गो-कोटि-दानं ग्रहणे खगस्य, प्रयाग गंगोदक-कल्पवासः।
यज्ञायुतं मेरु सुवर्ण-दानं, गोविन्द-नाम्नः न समं शतांशैः।।

(स्कन्द पुराण)

सूर्य ग्रहण या चन्द्र ग्रहण के समय में करोड़ों गोदान, प्रयाग या गंगा तट पर एक कल्प तक का वास, हजारों यज्ञ और सुमेरु पर्वत के समान ऊंचे सोने का दान - यह सब कुछ ''श्री गोविन्द'' नाम के कीर्तन के सौवें भाग के बराबर भी नहीं हो सकते। इसलिये सत्कर्मों को और शुभ कर्मों को हरिनाम के बराबर समझना नाम अपराध है।

9. श्रद्धाहीन और नाम श्रवण में उदासीन जीव को नाम का उपदेश देना।

वेदों में जितने प्रकार के उपदेश हैं उनमें हरिनाम का उपदेश ही सर्वश्रेष्ठ है। जिनकी अनन्य भक्ति में श्रद्धा हो गई है वही हरिनाम का असली अधिकारी है। जिनकी वैसी श्रद्धा नहीं है, जो अप्राकृत हरि सेवा से विमुख हैं, जिनकी हरिनाम सुनने में रुचि नहीं है, जो श्रद्धाहीन हैं, उनको हरिनाम का उपदेश करना नामापराध है। सबसे पहले बद्धजीव में शक्ति का संचार करना होगा, नाम के प्रति श्रद्धा पैदा करनी होगी, फिर हरिनाम देना चाहिये। जो लोग मान प्रतिष्ठा और रुपये पैसों के लोभवश अनाधिकारी को भी हरिनाम प्रदान करते हैं वे भी नाम अपराधी हैं।

10. नाम की अद्‌भुत महिमा को सुनकर भी नाम ग्रहण में रुचि न होना।

जो लोग मायिक संसार में मत्त हैं। मैं अमुक हूँ, यह सारी संपति और पुत्र-परिवार आदि मेरे हैं। जो इस प्रकार बुद्धि में मत्त रहते हैं। संयोगवश कभी क्षणिक वैराग्य या ज्ञान उदय होने पर साधुजनों के पास हरिनाम की महिमा तो सुनते हैं पर जानकर, सुनकर भी हरिनाम में अनुराग नहीं रखते, वे भी नाम अपराधी हैं।

* * *

जो भगवान् को जितना जानेगा, उसके अन्दर उतनी ही दीनता आयेगी। उसे हर समय ऐसा अभाव बोध होगा कि मैं भगवान् व उनके भक्तों के लिए कुछ भी न कर सका।

(श्रील भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज)

– 26–

नाम अपराध खंडन का उपाय

नाम अपराध का खण्डन केवल मात्र नाम का आश्रय ग्रहण करने से ही हो सकता है। दूसरे और किसी साधन से नहीं। इसलिये कल्याण कामी जीव को सर्वभाव से नाम भगवान् से विनीत प्रार्थना करनी होगी कि वह नाम अपराधों से छुटकारा दिलावे। नाम, नामी अभेद हैं। भगवान् उस कल्याण कामी जीव पर अवश्य कृपा करेंगे।

* * *

– 27 –

विधि–निषेध

पद्मपुराण उत्तर खण्ड 42 अ॰103 श्लोक में तथा नारद पंचरात्र 4॰2॰23 में लिखते हैं –

स्मर्त्तव्यः सततं विष्णुर्विस्मर्त्तव्यो न जातुचित्।
सर्वे विधि–निषेधाः स्युरेतयोरेव किंकराः।।

भगवान् विष्णु को जीवन भर सर्वदा याद रखो, यही मूल विधि है। जीव के जीवन निर्वाह के लिये वर्णाश्रमादि व्यवस्थाऐं इसी विधि के अधीन हैं। भगवान् को भूलना मूल निषेध है। पाप और बहिर्मुखता वर्जन तथा पापों के प्रायश्चित, ये सभी मूल विधि के अनुगत हैं। बाकी सभी विधि–निषेध भगवान् के स्मरण और विस्मरण के चिरकिंकर हैं। जिससे भगवान् का निरंतर स्मरण होता रहे उसे कर्तव्य माना गया है। यही विधि है और जिससे भगवान् का विस्मरण हो जाये ऐसा कार्य ही निषेध है।

* * *

– 28 –

शुद्ध नाम के लक्षण

21.06.1979

अन्याऽभिलाषिताशून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम्।
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुत्तमा।।

(श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु 1.1.11)

अन्य अभिलाषा अर्थात् भोग व मोक्ष की अभिलाषा से रहित, ज्ञान तथा कर्मादि से अनावृत, श्रीकृष्ण के उद्देश्य से अनुकूलभाव सहित, शरीर, वाणी एवं मन से जो अनुशीलन-क्रिया या चेष्टा की जाती है, उसे उत्तमा-भक्ति कहते हैं।

दूसरी-दूसरी अभिलाषाओं से शून्य होकर और ज्ञान कर्म आदि साधनों के द्वारा पाये जाने वाले फलों को छोड़कर, नाम के प्रतिकूल भावों को हृदय से निकाल कर, सिर्फ नाम के अनुकूल भावों के साथ जो नाम लिया जाता है, वह शुद्ध नाम है। नाम द्वारा पाप दूर करना अथवा मोक्ष प्राप्त करना आदि समस्त प्रकार की वासनाओं को ही अन्याभिलाषा कहते हैं। भक्ति के लक्षणों को देखते हुये यह साफ पता चल जायेगा कि नामापराध और नामाभासरहित नाम ही शुद्ध नाम है।

***

जैसे क्रोध से तप का, काम से बुद्धि का, अन्याय से लक्ष्मी का, अभिमान से विद्या का नाश होता है वैसे ही श्रीकृष्ण के ध्यान व जप करने से समस्त पापों का नाश होता है।(स्कन्ध पुराण)

– 29 –

सिर्फ वैष्णवाभास से प्रेम लाभ नहीं होता!

बहुत से वैष्णव, वैष्णव चिन्ह धारण कर निरंतर नामाभास करते हैं परंतु अनेक दिनों तक ऐसा करने पर भी प्रेम लाभ नहीं कर पाते, इसका क्या कारण है?

इसमें एक रहस्य है। वह यह है कि वैष्णवाभास साधक श्रद्धापूर्वक भगवान् की अर्चामूर्ति को हरि मान कर पूजा करते हैं, परंतु कृष्ण के भक्तों की श्रद्धापूर्वक पूजा नहीं करते। शुद्ध भक्ति के लाभ के योग्य होने पर भी अनन्य भक्ति के अभाव में, जीव जिस किसी को साधु मान कर अगर उसका संग करता है और अगर वह शुद्ध भक्त न होकर मायावादी हुआ तो उसके कुसंग से साधक मायावाद के अपसिद्धांतों की शिक्षा ग्रहण कर रही सही भक्ति के आभास से हाथ धो बैठेगा और वह वैष्णव अपराधी और नाम अपराधी की श्रेणी में आ जाएगा। ऐसी हालत में उसका प्रेम प्राप्त करना तो दूर की बात, उल्टा कल्याण होना कठिन ही नहीं, असंभव हो जायेगा। हां, यदि उसकी पूर्व सुकृति प्रबल हो तो वह उसे कुसंग से छुटकारा दिलाकर सत्संग में लगा देगी और पुनः वैष्णवता लाभ करा देगी।

* * *

मनुष्य के पूर्वजन्म से संचित पाप जब तक नष्ट नहीं होते तब तक भगवान् श्रीकृष्ण में उनकी भक्ति नहीं होती है।

सब जग माया को भजे, माधव भजे न कोय।
जो प्राणी माधव भजे, तो माया चेरी होय।।

(पद्म पुराण)

- 30 -

नाम अपराध का फल

पंचमहापाप से करोड़ गुणा, जो पाप राशि का फल होता है, नाम अपराध का फल उससे भी अधिक भयंकर होता है।

प्रश्न :- यदि एक नाम ही समस्त पापों का हरण कर लेता है तो लगातार (तैलधारावत्) नाम लेने की क्या आवश्यकता है?

उत्तर :- एक शुद्ध नाम ही समस्त पापों का हरण कर लेता है लेकिन नाम अपराधी जीवों से शुद्ध नाम नहीं होता क्योंकि उनका अन्त:करण और व्यवहार मलीन होता है। वे स्वभाव से ही बहिर्मुख होते हैं। उनकी साधु व्यक्ति, साधु वस्तु और सत्संग में रुचि नहीं होती। उनकी रुचि कुपात्र में, कुसंग में, गंदे कामों में होती है। लगातार नाम करने से बुरे संग और बुरे कामों के लिये उसको समय ही नहीं मिलेगा और कुसंग नहीं होने से नाम क्रमश: शुद्ध हो जाएगा। तदोपरांत सद्विषय में स्वाभाविक रुचि हो जायेगी।

* * *

कृष्णनाम करे अपराधेर विचार।
'कृष्ण' बलिले अपराधीर ना हय विकार।।

(चै. च. आ. 8/24)

कृष्णनाम अपराध का विचार करते हैं। कृष्ण नाम करने पर भी नामापराधी का हृदय द्रवित नहीं होता है, अथवा उसके अंगों में पुलकादि कोई भी विकार नहीं होता।

– 31 –

पण्डित जगदानन्द का प्रेम विवर्त ग्रन्थ में उपदेश

असत् संग में शुद्ध कृष्ण नाम नहीं होता। वहाँ सिर्फ नाम अक्षर ही मुख से निकलता है। वहां तो हमेशा नाम अपराध ही होता है। अच्छे भाग्य से कभी-कभी नामाभास होता है। परंतु नाम अपराध और नामाभास दोनों ही कृष्ण भक्ति में रुकावट हैं। यदि शुद्ध कृष्ण नाम करना चाहते हो तो साधु का संग करो। साथ ही योग, मोक्ष और सिद्धि आदि की इच्छाओं को छोड़ो। दस नाम अपराध और मान-अपमान से दूर रहो। आवश्यकता अनुसार अनासक्त भाव से विषयों का भोग करते हुये कृष्ण नाम-कीर्तन करो। कृष्ण भक्ति के प्रतिकूल भावों को छोड़ो और अनुकूल को ग्रहण करो। कर्म, ज्ञान और योग की चेष्ठाओं को छोड़ो। मर्कट (बन्दर जैसा) वैराग्य से हमेशा दूर रहो। श्री कृष्ण ही मेरे रक्षक और पालक हैं, ऐसा भरोसा रखो। दैवी गुणों को अपनाओ और श्री कृष्णचन्द्र को आत्म-निवेदन कर दो। इस छः प्रकार की शरणागति का आचरण करके माया के जंजाल को नष्ट कर दो। जीव के लिये सच्चे साधु का संग बड़ा ही दुर्लभ है जिस लिये भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं ही साधु और भक्त के रूप में नवद्वीप में अवतरित हुए हैं। इसलिये हे बुद्धिमान पुरुषो, श्री गौरांगदेव के चरण कमलों का आश्रय ले लो, उनसे बढ़ कर साधु या गुरु कोई नहीं है। वे स्वयं श्री कृष्ण हैं।

वैरागी भाई जब कभी तुम दूसरों से मिलो, उनसे न तो ग्राम्य कथा कहो और न सुनो। यदि गौरांग चरणों में प्रीति रखना चाहते हो

तो स्वप्न में भी स्त्रियों से संभाषण न करो। तुम घर से अपनी स्त्री को छोड़कर भजन करने के लिये आये हो। इस विषय में छोटे हरिदास के प्रति श्री मन्महाप्रभु जी का कठोर व्यवहार सर्वदा याद रखना। बढ़िया भोजन न करना, बढ़िया कपड़े न पहनना। सदा सर्वदा मन में श्री राधा-श्रीकृष्ण की सेवा करना। बड़े हरिदास की तरह हर समय हरिनाम करना और अष्टकाल श्री राधाकृष्ण की कुँजवन में सेवा करना। क्या वैरागी, क्या गृहस्थी, सबको सदैव हरिनाम करना चाहिये। **बिना नाम के एक क्षण का भी समय नष्ट न हो, इसका सर्वदा ध्यान रखना। अनेक साधनों की कोई आवश्यकता नहीं, सिर्फ हरिनाम करना। इसी से जीवन सफल होगा।** बद्धजीवों पर कृपा करने के लिये, श्रीकृष्ण ही नाम रूप में अवतरित हुये हैं। **पुनः वे श्रीकृष्ण ही गौर और गौरधाम हुये हैं।** इसलिये एकान्त और सरल चित्त से गौरचन्द्र का भजन करो। ऐसा करने से ही श्रीकृष्ण चरणकमलों को प्राप्त कर लोगे। गौर भक्तों के संग में - ''हा गौरांग! हा गौरांग!'' पुकारते हुये हरे कृष्ण नाम का कीर्तन और नृत्य करो। ऐसा करने से शीघ्र ही कृष्ण नाम प्रेम को प्राप्त कर लोगे जिसे श्री चैतन्य महाप्रभु जी जगत् में बांटने के लिये अवतीर्ण हुये हैं।

***

– 32–

आत्म निवेदन

शरीर के भीतर जो जीव है वह देही और अहं कहलाता है। उसको केन्द्र करके, जो मैं बुद्धि होती है, उसी को देही निष्ठा, अंहता कहते हैं। देह में, जो मैं, मेरी की बुद्धि है, उसे देह निष्ठा ममता कहते हैं। इन ''मैं'' और ''मेरी'' दोनों को श्रीकृष्ण के प्रति अर्पण करना चाहिये। मै और मेरी इस बुद्धि को छोड़कर, मैं श्रीकृष्ण का प्रसाद-भोजन करने वाला श्रीकृष्ण का दास हूँ और यह मेरा शरीर श्रीकृष्ण की सेवा के उपयोगी एक यंत्र है, इस बुद्धि से ही जीवन निर्वाह करना आत्म निवेदन है।

***

– 33 –

श्री कृष्ण-विमुख कौन है ?

श्रीकृष्ण भक्ति रहित (विषय भोगों में आसक्त), स्त्री-संग में आसक्त, मायावाद (भगवान् के विग्रह को मायिक मानने वाला), भगवान् कृष्ण, राम आदि के शरीर को मनुष्य के शरीर की तरह मानना, जैसे मनुष्य का शरीर नाशवान् है वैसे ही श्रीकृष्ण भगवान् और श्री राम भगवान् को मानना इत्यादि। यह सब श्रीकृष्ण विमुख जीव की निशानी है। इनका संग साधक को दूर से ही त्याग देना चाहिये। संग शब्द से आसक्ति का बोध होता है। दूसरे लोगों के साथ जो निकटता होती है या बातचीत होती है, उसे संग नहीं कहते। संग तो तब होता है जब उस निकटता या बातचीत में आसक्ति होती है। पेड़-पौधे जिस प्रकार गंदी वायु तथा अधिक गर्मी के कारण नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार कृष्ण विमुखता से भक्ति लता भी नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है।

***

– 34 –

साधु संग की महिमा

22.06.1979

यस्य यत्संगतिः पुंसो मणिवत् स्यात् स तद्गुणः।
स्वकुलर्द्ध्यैततो धीमान् स्वयूथान्येव संश्रयेत्।।

अर्थात् जिस व्यक्ति का जैसा संग होता है उसमें ठीक उसी प्रकार के गुण पैदा हो जाते हैं, जिस प्रकार मणि का जिस वस्तु से स्पर्श होता है वह वस्तु भी उसी रंग की दिखने लगती है। इसलिये सच्चे साधु के संग से साधु हुआ जा सकता है। साधु संग समस्त कल्याणों का मूल है। यदि कहीं अनजान में भी साधु संग हो जाये तो जीव का कल्याण निश्चित् है।

श्रीमद्भागवत् पुराण के 03/23/55 के अनुसार जैसे अज्ञानवश असत्पुरुषों के साथ किया हुआ संग संसार बंधन का कारण होता है, वही संग अनजान में भी यदि सत्पुरुषों के साथ हो जाये तो वह संसार से मुक्ति का कारण हो जायेगा। जैसे श्रीमद्भागवत् 7/5/32 में कहते हैं कि जब तक जीव अकिंचन भगवत्प्रेमी, महात्मा, भगवद्भक्तों के चरणों की धूल में स्नान नहीं करता तब तक समस्त अनर्थों का नाश करने वाले भगवान् के श्री चरणों में जीव की रतिमति नहीं होती।

श्रीमद्भागवत् 10/48/31 में कहते हैं गंगा आदि जलमय तीर्थों की और मृतिका तथा शिलामय देवताओं की बहुत दिनों तक श्रद्धा से सेवा करने पर वे पवित्र करते हैं परंतु संत पुरुष तो केवल दर्शनमात्र से पवित्र कर देते हैं। श्रीमद्भागवत 10/51/53 में पुनः

कहते हैं मायाबद्ध जीव अनादि काल से संसार में कभी देव योनि में और कभी पशु आदि नाना योनियों के कर्म चक्कर में बँधे हुये घूम रहे हैं। यदि किसी पूर्व सुकृति के प्रभाव से साधु संग (सत्संग) हो जाये तब उसी समय साधु पुरुषों के परम आश्रय सभी कारणों के कारण भगवान् श्रीकृष्ण में जीव की मति दृढ़ता से लग जाती है।

* * *

– 35 –

भक्तिप्रद सुकृति

एकादशी, जन्माष्टमी, गौर पूर्णिमा, रामनवमी, नृसिंह चर्तुदशी आदि साधु भाव पैदा करने वाले व्रत, तुलसी सेवा, श्री मंदिर परिक्रमा, श्रीविग्रह दर्शन, महाप्रसाद सेवन, धाम-दर्शन, साधु संग आदि यह सब क्रिया, भक्तिप्रद सुकृति है। भक्तिप्रद सुकृति जब अधिक मात्रा में इकट्ठी हो जाती है तब वह कृष्ण भक्ति को पैदा करती है । भक्तिप्रद सुकृति के प्रभाव से साधु संग होता है तब उसी समय सभी कारणों के कारण भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में उस भाग्यशाली जीव की मति दृढ़ता से लग जाती है। ऐसा जीव जन्म मृत्यु रुपी संसार चक्कर से छूट जाता है और भगवद्धाम में भगवान् की सेवा को प्राप्त करता है, जो जीव का नित्य और स्वरूप धर्म है। सत्संग के बिना कृष्ण भक्ति प्राप्त करने का दूसरा कोई भी मुख्य उपाय नहीं है।

* * *

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

– 36–

चार आचार्यगण, सात पुरियाँ, चार धाम

चार आचार्यगण

श्री मन्मध्वाचार्य, श्रीमद् रामानुजाचार्य,
श्री निम्बादित्याचार्य, श्री विष्णु स्वामी

सात पुरियों के नाम

अयोध्या, मथुरा, माया (हरिद्वार), काशी, काँची,
अवन्तिका (उज्जैन) और द्वारिका

चार धामों के नाम

बद्रीनाथ, द्वारका, रामेश्वरम्, पुरी धाम (जगन्नाथ पुरी)

* * *

– 37–

माया से बँधे हुये जीवों की हथकड़ी

मायिक हथकड़ी तीन प्रकार की होती है। सत्त्वगुण से बनी हुई, रजोगुण से बनी हुई एवं तमोगुण से बनी हुई। मायाबद्ध जीव इन तीन प्रकार की हथकड़ियों से बँधे हुये हैं। हर एक जीव, चाहे वह तमोगुण से हो, रजोगुण से हो, अथवा सत्त्वगुण से हो, माया की जंजीर में बँधा हुआ है। हथकड़ी चाहे सोने की बनी हुई हो, चाहे चांदी की या लोहे की हो, इनसे बाँधे जाने पर जो कष्ट होता है, उसमें कोई भी अंतर नहीं होता।

चिद्वस्तु को माया स्पर्श नहीं कर सकती है। जीव अणुचित्त है। जब वह यह अभिमान करता है कि मैं माया का भोक्ता हूँ उस

समय जीव जड़ अहंकार रूप लिंग शरीर से ढक जाता है। लिंग शरीर द्वारा ढके जीव के दोनों पैरों में बेड़ी पड़ जाती है। सात्त्विक अहंकार से युक्त, ऊपर वाले लोकों में रहने वाले जीव, देवता कहलाते हैं। उनके पैरों में सोने की अर्थात् सात्त्विक जंजीर होती है। राजसी जीव देवता और मानव भावमिश्र होते हैं। उनके पैरों में राजस अर्थात् चाँदी की जंजीर होती है। तामसी जीव जड़ आनंद में मत रहते हैं। उनके पैरों में लोहे की जंजीर होती है अर्थात् तमोगुणी जंजीर होती है। इन जंजीरों से जकड़े हुये जीव माया के जेल खाने से तब तक बाहर नहीं निकल सकते हैं जब तक वे भगवान् श्रीकृष्ण की शरण ग्रहण नहीं करते।

***

– 38 –

सत्संग किसे कहते हैं ?

28.07.1979

सत्वस्तु भगवान्, भगवद्भक्त, भगवान् के नाम, गुण, रूप, लीला, भगवान् के धाम, श्रीमद्भागवत शास्त्र, भगवान् के श्रीविग्रह इत्यादि से, जो घनिष्ठता से संग किया जाता है, वह सत्संग है।

जैसे लोहा जब आग में जलाया जाता है तो धीरे-धीरे गर्म होकर एक ऐसी हालत में आ जाता है कि वह आग की तरह जलाने का गुण प्राप्त कर लेता है । वह आग से तारतम्य प्राप्त कर लेता है इसी प्रकार बद्ध जीव का जन्म-जन्मांतरों की विषय वासनाओं से लिप्त गंदा चित्त जब सत्संग प्राप्त करता है तो वह धीरे-धीरे सत् वस्तुओं से तारतम्य प्राप्त कर लेता है और जन्म-जन्म की विषय वासनाओं को जला देता है। चित्त जो कि विषय वासनाओं के राग

से अशांत है, शांति लाभ प्राप्त कर लेता है। इसलिये निश्चय जानो कि सत्संग किये बगैर कभी भी चित्त में शांति लाभ नहीं की जा सकती।

दूसरी हालत में यदि लोहे को जंग लगा हुआ हो तो चुम्बक (Magnet) उसे आकर्षित नहीं करता है। सबसे पहले उस जंग (Rust) को साफ करना पड़ेगा जिससे वह चुंबक से आकर्षित होने की योग्यता प्राप्त कर ले। इसी प्रकार हमारा चित्त जो जंग लगे हुये लोहे की तरह है, उसमें भी जन्म-जन्म के अच्छे-बुरे कर्मो का रंग चढ़ा हुआ है। जब तक वह रंग जो कि जंग की तरह है, साफ नहीं होता, तब तक हमारा चित्त सत्संग द्वारा आकर्षित नहीं होगा। इस चित्त के जंग को सिर्फ एकमात्र हरिनाम कीर्तन ही साफ कर सकता है। इसलिये बद्धजीव यदि अपने कल्याण का इच्छुक हो तो सदा श्री हरिनाम कीर्तन किया करे। इसके बिना चित्त से विषय रूपी जंग नहीं उतरेगा और सत्वस्तु भगवान् में प्रीति नहीं होगी। इसे लाभ करने के लिये हमें कलियुग के तारक महामंत्र का कीर्तन करना चाहिये।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

* * *

संसार में रहते समय नाना प्रकार की असुविधाएँ हैं किन्तु उन असुविधाओं में मोहित होना या असुविधाएँ दूर करने की चेष्टा करना ही हमारा प्रयोजन नहीं है। हमारा वास्तविक प्रयोजन है-भगवान् श्रीकृष्ण से प्रेम करना।

(श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती प्रभुपाद)

– 39 –

आसक्ति (Attachment)

जहाँ हमारी तीन तरह की शक्तियाँ (Energies) जाती हैं वहीं हमारी आसक्ति हो जाती है। तन की शक्ति, मन की शक्ति, धन की शक्ति जहां जाती है वहीं हमारा प्यार हो जाता है। बद्ध जीवों को भगवान् की सत्ता का ज्ञान नहीं होता। वह संसार में पूरी तरह से आसक्त होता है। जीवों की यह तीन तरह की शक्तियाँ संसार में लगती हैं। इसलिये उनका संसार के प्रति स्वाभाविक ही प्यार होता है। यदि भगवान् के साथ प्यार करना चाहते हो तो इन तीन तरह की शक्तियों को भगवान् में लगानी शुरु कर दो। सिर्फ मुख से कहने से ही प्यार नहीं होगा। सेवा भाव होना ही प्रीति का लक्षण है।

***

– 40 –

जीव का जड़ बंधन

29.07.1979

जीव आत्मा इस जगत् में जड़ मन द्वारा बँधी हुई है। वह अपने को जानने में असमर्थ होती है कि मैं भगवान् का नित्य दास हूँ तथा भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा करना ही मेरा धर्म है । भगवान् की परम पवित्र लीला कथाओं के सुनने और कीर्तन करने से आत्मा की ज्यों ज्यों मैल धुलती जाती है त्यों त्यों आत्मा की शक्ति बढ़ती जाती है। शक्ति बढ़ने से जड़ बँधन ढीला पड़ जाता है । जड़ बँधन जितना

ढीला होता जाता है, आत्मा की अपनी वृति भी उसी परिमाण में जागृत हो जाती है। उस जीव आत्मा को फिर जड़ अतीत, चिन्मय सूक्ष्म स्वरूप का दर्शन होने लग जाता है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार आँखों में सुरमा लगाने से आँखों का दोष मिटने पर उनमें छोटी छोटी वस्तुओं को देखने की शक्ति आने लग जाती है । जीव में अपनी शक्ति नहीं है कि भव बंधन से मुक्त हो सके। जेल में बंद कैदी अपने-अपने अपराधों की सजा भोगते हैं। अपराधी निश्चित् सजा भोगे बिना, समय से पहले जेल से छुटकारा नहीं पा सकता। जिस अपराध के कारण उसे कैदी बनाया गया है, जब तक उसकी सजा खत्म नहीं होगी तब तक वह कारागार से मुक्त नहीं हो सकता। इसी प्रकार जीवात्मा का यह भूलना कि मैं भगवान् का नित्य दास हूँ, अपराध है। इसी अपराध के कारण वह माया द्वारा बद्ध हुआ, संसार में नाना प्रकार के दु:ख और बार-बार जन्म-मृत्यु भोग करता है। जब तक जीव आत्मा यह अनुभव नहीं करती कि मैं भगवान् का नित्य दास हूँ तब तक वह अपराधी रहेगी और इस माया के जेलखाने में बंदी रहेगी । भगवान् की पवित्र लीला-कथाओं का श्रवण और कीर्तन करने से ही चित्त की मैल धुलने पर ही जीव इसका अनुभव कर सकता है तथा इस माया के कारागार से छुटकारा पा कर भगवान् को प्राप्त कर सकता है। इसलिये हमें सदा महामंत्र का कीर्तन करना चाहिये।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।।

* * *

– 41 –

पाप कहाँ से उत्पन्न हुआ?

जीव मात्र ही भगवान् के नित्य दास हैं। इस ज्ञान को, कि जीव भगवान् का नित्य दास है, विद्या कहते हैं और इस ज्ञान को भूलना ही अविद्या है। किसी कारण से, जिन जीवों ने अविद्या का सहारा ले रखा है, उन सबके हृदय में पाप का बीज उत्पन्न हुआ। जो नित्य पार्षद जीव हैं उनके हृदय में यह पाप बीज नहीं होता।

* * *

– 42 –

चित्त में वासनाओं की आग

30.07.1979

जो बातें हम कहते हैं, सुनते हैं, देखते हैं, करते हैं वही सब हमारे चित्त में तरंगित होती रहती हैं । जिनकी रगड़ से हमारे चित्त में आग पैदा होती रहती है और हमें जलाती रहती है। चाहे हम घर में रहे, बाहर रहें, दफ्तर में रहें, बाजार में घूमें, रिश्तेदारों में रहें, सगे–संबंधियों में रहें, हमारे चित्त में आग सुलगती रहती है। इसका कारण यही है कि हम हर समय विषयों की बात करते हैं, सुनते हैं, देखते हैं इत्यादि। चाहे हम किसी रिश्तेदार से मिलें, दोस्त से मिलें, यही विषयों की बातें ही करने को मिलती हैं जिससे चित्त में हर समय आग सी लगी रहती है। इसी प्रकार जब हम भगवद् संबंधी ही बात करेंगे, सुनेंगे, बोलेंगे, देखेंगे तब चित्त में भगवद् संबंधी तरंगे (Vibrations) पैदा हो जायेंगी, जिनकी रगड़ से विषयों से पैदा

हुई आग बुझनी शुरु हो जायेगी। जब हम लगातार ऐसी तरंगे पैदा करेंगे तो यह आग हमेशा के लिये बुझ जायेगी और चित्त शांति लाभ करेगा । चित्त में लगी आग तसल्ली देने पर शांत नहीं होगी। वह तो सिर्फ भगवद् संबंधी तरंगे पैदा होने पर ही शांत हो सकती है। यदि आप चित्त में शांति लाभ करना चाहते हो तो सदैव भगवान् के विषय में कहो, सुनो, बोलो, देखो, कार्य करो, तभी शांति लाभ हो सकती है।

* * *

– 43 –

जीवों की हालत

31.07.1979

श्री जगदानन्द जी ने ''प्रेम विवर्त'' ग्रन्थ में जीवों की हालत के विषय में बहुत ही सुंदर लिखा है :–

पदार्थ दो तरह के होते हैं :– चेतन और जड़ । जिन पदार्थों में इच्छा, क्रिया, अनुभव शक्ति होती है, वह चेतन होते हैं जिनमें यह सब नहीं होते वह जड़ पदार्थ कहलाते हैं। फिर चेतन भी दो प्रकार के होते हैं :–

1. पूर्ण या विराट चेतन 2. अणु चेतन या क्षूद्र चेतन ।

भगवान् पूर्ण चेतन हैं और वह हैं स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ''कृष्णास्तु भगवान् स्वयम्।'' जीव क्षूद्र चेतन है यह भगवान् की शक्ति का अंश है तथा असंख्य में हैं। शास्त्रों में समस्त जीवों और भगवान् का आपस में संबंध बतलाने के लिये सूर्य और उसकी किरणों में चमकने वाले असंख्य क्षूद्र कणों का उदाहरण दिया गया है। भगवान् कृष्ण को चिन्मय सूर्य और जीवों को चित्तकण कहा

गया है । चित्तकण जीव का स्वभाव ही कृष्ण की सेवा करना है । यही जीव का नित्य धर्म है। जैसे दाहिका शक्ति के बिना आग की सत्ता स्वीकार नहीं की जा सकती। वैसे ही कृष्ण सेवा से रहित जीव की सत्ता स्वीकार नहीं की जा सकती। वस्तु को छोड़कर धर्म और धर्म को छोड़कर वस्तु का कोई अस्तित्त्व नहीं रहता। तब तो वस्तु और धर्म विकृत हो जाते हैं। जीवमात्र का धर्म कृष्ण की सेवा करना है। जब जीव स्वतंत्र होने के नाते, कृष्ण सेवा से विमुख होकर नाना प्रकार के भोगों की इच्छा करने लगता है तो उसी समय भगवान् की माया झपट कर उस जीव को अपने जाल में फँसा लेती है। जैसे भूत पिशाची के प्रभाव से मनुष्य की मति खराब हो जाती है। उसी प्रकार माया के प्रभाव से जीव का नित्य धर्म ढक जाता है जिससे वह अपना और भगवान् का स्वरूप भूल जाता है तथा माया का दास होकर इधर-उधर भटकने लगता है। वह कभी राजा होता है, कभी प्रजा, कभी ब्राह्मण, कभी शूद्र, कभी मनुष्य, कभी जानवर, कभी सुखी, कभी दुखी, कभी स्वर्ग लोक में और कभी नरक लोक में तो कभी मृत्युलोक में जाता है। इस तरह संसार में भटकता रहता है। जैसे पक्षी कभी पेड़ की किसी डाल पर तो कभी किसी डाल पर, इसी प्रकार यह जीव भी संसार रूपी वृक्ष की, कभी किसी डाल पर तो कभी किसी डाल पर, भटकता रहता है।

जब कभी सौभाग्यवश किसी सच्चे साधु से उसकी भेंट हो जाती है तो उसके संग से वह अपना सच्चा स्वरूप पहचान कर संसार से विरक्त हो जाता है। उसे अपनी वर्त्तमान हालत पर बहुत दु:ख होता है। वह रो-रो कर भगवान् से प्रार्थना करता है-

''हे कृष्ण! मैं आपका नित्यदास हूँ किंतु आपकी सेवा भूल कर, मैं अभागा न जाने कितने जन्म-जन्मान्तरों से माया की सेवा करता हुआ भटक रहा हूँ। हे दीनानाथ! पतित पावन! मेरी रक्षा

करो। मुझे अपनी माया से उबार कर अपनी सेवा में नियुक्त कर दो।''

भगवान् उस जीव की करुण पुकार सुनकर उसे शीघ्र ही अपनी माया से पार कर देते हैं । वह उसे अपनी चित्त शक्ति का बल प्रदान करते हैं जिससे उसका माया के प्रति आकर्षण धीरे-धीरे कम होता जाता है और वह माया का पीछा छोड़ता हुआ भगवान् की तरफ बढ़ता है। अंत में जीव श्रीभगवान् के श्रीचरणकमलों को प्राप्त करने में सफल हो जाता है। इसी प्रकार सत्संग में लिया गया ''कृष्ण नाम'' इस माया के संसार को पार करने का एकमात्र उपाय है। इसलिये कल्याणकामी जीव को सर्वदा सत्संग में कृष्ण नाम कीर्तन करना चाहिये।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

– 44 –

भगवद्-ज्ञान

04.08.1979

इस मायारूपी जगत् का ज्ञान लाभ करने के लिये हर एक प्राणी को कुछ न कुछ समय लगाना पड़ता है। उदाहरण के लिये एक मनुष्य को 20-25 साल की आयु तक हिन्दी, पंजाबी, अंग्रेजी और दूसरी-दूसरी भाषाओं को सीखने में सफलता मिलती है। फिर उन भाषाओं का ज्ञान उसके मस्तिष्क में आ जाता है। उन भाषाओं को वह पढ़ सकता है और दूसरों को पढ़ा सकता है। इसी प्रकार भगवद् ज्ञान लाभ करने के लिये भी हमें क, ख, ग से शुरु करना

पड़ेगा । तभी वह ज्ञान आपके मस्तिष्क में आयेगा और तभी आप भी भगवान् के विषय में बोल सकेंगे और यथार्थ रूप से बता सकेंगे कि भगवान् कौन हैं? जैसे दूर से रोशनी दिखाई देती है तो आपको एक ज्योति दिखाई देगी। जब उस रोशनी को आप निकट से देखेंगे तो आपको वह स्थान भी दिखाई देगा जहाँ से रोशनी निकल रही है। इसी प्रकार जो भगवान् के निकट नहीं होते वे कहते हैं कि भगवान् ब्रह्म (ज्योति स्वरूप) हैं। पर जो उस ज्योति के निकट आ जाते हैं, वही भगवान् के स्वरूप का दर्शन करते हैं।

इसलिये भगवद् ज्ञान लाभ करने के लिये हमें सच्चे साधु का संग करना पड़ेगा। श्रुति, स्मृति, पुराण और पंचरात्र आदि शास्त्रों की विधियों को छोड़कर, भले ही कोई श्रीहरि की अनन्य भक्ति भी क्यों न करे, उससे उसका मंगल नहीं हो सकता बल्कि उसे उत्पात का कारण ही समझना चाहिये।

जिस किसी उपाय से श्रीकृष्ण के चरणों में मन लगाया जाये उसे साधन भक्ति तो कहा जा सकता है परन्तु जब तक सच्चे सद्गुरु के आनुगत्य में जीव आत्मा भजन नहीं करेगी तब तक किसी दूसरे पथ का अनुसरण करने पर भी अनन्य भक्ति प्राप्त नहीं की जा सकती। यह अटल सत्य है देखिये, भक्तिरसामृतसिंधु–

श्रुति-स्मृति-पुराणादि-पंचरात्र-विधिं बिना।
ऐकान्तिकी हरेर्भक्तिरुत्पातायैव कल्पते।।

(भक्ति रसामृतसिन्धु)

* * *

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

– 45 –

वैराग्य

04.08.1979

मर्कट वैराग्य ना कर लोक देखाइया।
यथायोग्य विषय भुञ्ज अनासक्त हैआ।।
अन्तरे निष्ठा कर, बाह्ये लोक व्यवहार।
अचिराते कृष्ण तोमाय करिबेन उद्धार।।

साधक को मर्कट वैराग्य अर्थात् बंदर जैसा वैराग्य नहीं करना चाहिये। जैसे बंदर एक डाल से दूसरी डाल पर फिरता है ऐसे लगता है कि वह बहुत वैरागी है पर दिल से घोर विषयी होता है । साधक को ऐसे वैराग्य से हमेशा दूर रहना चाहिये। समस्त विषयों को हरि सबंधी जानकर, अनासक्त भाव से, (Without any attachment) जरूरत के अनुसार उनको ग्रहण करना चाहिये । इसका नाम युक्त वैराग्य है। दिल के अंदर भगवान् के प्रति निष्ठा रखते हुये बाहर से लोक व्यवहार करना चाहिये। इससे भगवान् श्रीकृष्ण तुमको अतिशीघ्र इस संसार से मुक्त कर देंगे।

हरि संबंधी वस्तुओं को सांसारिक मानकर मुक्ति के लोभ से उन्हें छोड़ने को कपट वैराग्य कहते हैं। वैरागी भाई सर्वदा यही कहा करो –

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

* * *

– 46 –

वैष्णव किसे कहते हैं?

04.08.1979

जो साधक दस प्रकार के नाम अपराध, बत्तीस प्रकार के सेवा अपराध, भगवान्, भक्त, शास्त्र आदि के प्रति अपराध और वैष्णव भक्त के प्रति अपराधों को छोड़कर, भाव से कृष्ण नाम करते है, वे वैष्णव हैं। वैष्णव तीन प्रकार के होते हैं – कनिष्ठ, मध्यम और उत्तम।

कनिष्ठ वैष्णव :- कनिष्ठ वैष्णव वे होते हैं जो बीच-बीच में भगवान् श्रीहरि का नाम लेते हैं। तथा उनका अर्चा पूजा में तो आग्रह होता है पर वैष्णव सेवा में आग्रह नहीं होता।

मध्यम वैष्णव :- मध्यम वैष्णव वे होते हैं जो निरंतर सोने के समय को छोड़ कर श्रीहरि का नाम लेते हैं।

उत्तम वैष्णव :- उत्तम वैष्णव वे होते हैं जो हर समय श्रीहरि का नाम लेते हैं और उनके दर्शनमात्र से, मुख से हरिनाम निकलने लग जाता है। उनका चित्त, बुद्धि, ज्ञान, इन्द्रियाँ इत्यादि कृष्ण-नाम से तारतम्य को प्राप्त कर लेती हैं। जैसे लोहा जब आग में तपाया जाता है तो धीरे-धीरे गर्म होकर आग जैसा लाल हो जाता है और आग जैसी जलाने की क्षमता लाभ कर लेता है। इसे हम कहेंगे कि लोहे ने आग जैसी तारतम्य प्राप्त कर लिया है। इस प्रकार उत्तम वैष्णव का मन, इन्द्रियाँ आदि भगवान् श्रीकृष्ण-नाम से तारतम्य प्राप्त कर लेती हैं। जैसे चुंबक लोहे को अपनी तरफ आकर्षित कर लेता है इसी प्रकार उत्तम वैष्णव भी बद्धजीव को अपनी तरफ आकर्षित कर लेता है और वह जीव अपने स्वरूप धर्म को प्राप्त

कर लेता है और स्वरूप धर्म के प्रभाव से भगवान् श्रीहरि का नाम लेने लग जाता है। श्रीमन् महाप्रभु की शिक्षा के अनुसार और किसी भी लक्षण से वैष्णव का निर्णय नहीं करना चाहिये। सर्वदा इस महामंत्र का जाप करें।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

जब बद्ध जीव उत्तम वैष्णव के दर्शन करता है तो उस जीव के कर्म बन्धन समाप्त हो जाते हैं और वह पाप-पुण्य से मुक्त हो जाता है और अपने स्वरूप में स्थित होकर भगवान् श्रीकृष्ण का नाम जपने लग जाता है। स्वयं भगवान् (श्रीचैतन्य) महाप्रभु जी जब किसी बद्धजीव को स्पर्श करते या बुलाते थे तो वह जीव कर्मबंधन से मुक्त होकर भगवान् श्रीकृष्ण का नाम पुकारने लग जाता था। यहाँ तक कि शेर, चीते इत्यादि पशु भी भगवान् चैतन्य महाप्रभु की आज्ञा से-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

महामंत्र का कीर्तन करने लग जाते थे। इस प्रकार उत्तम वैष्णव का चित्त भी श्रीहरि के नाम, गुण, लीला और रूप से तारतम्य को प्राप्त किये होता है। वह यह भी क्षमता रखता है कि बद्धजीव उसे देखते ही श्रीहरि का नाम पुकारने लगे। इसलिये हर समय महामंत्र का कीर्तन किया करो ताकि आपका चित्त जो कि जन्म-जन्मांतरों की वासनाओं से दूषित है, भगवान् के नाम, गुण, लीला, रूप से तारतम्य प्राप्त कर सके और वैष्णव बनने का सौभाग्य लाभ कर मनुष्य जन्म सफल कर सके। जैसे पानी से भरे हुये घड़े में यदि कोई छिद्र हो तो धीरे-धीरे सब पानी निकल कर घड़ा खाली हो जाता है। इसी प्रकार क्षण-क्षण बीत कर यह जिंदगी भी पूरी हो

जायेगी। पीछे से पछताना पड़ेगा। इसलिये अभी से ही भगवान् के नाम का कीर्तन करना आरंभ कर देना चाहिये। समय नष्ट नहीं करना चाहिये। इसलिये सर्वदा इस महामंत्र का कीर्तन किया करें।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

* * *

– 47 –

वैष्णवजन क्यों अन्य देवी देवताओं का प्रसाद ग्रहण नहीं करते ?

05.08.1979

श्रीकृष्ण समस्त ईश्वरों के ईश्वर अर्थात् परमेश्वर हैं। देवी-देवता उनके दास-दासियाँ हैं अर्थात् भक्त हैं। भक्तों के प्रसाद के प्रति वैष्णवजन कभी भी अश्रद्धा प्रकट नहीं कर सकते क्योंकि भक्तों का प्रसाद ग्रहण करने से शुद्ध भक्ति की प्राप्ति होती है। भक्तों की चरणधूलि, उनका चरणामृत और अधरामृत – यह तीनों ही भवरोग को दूर करने की महौषधि है। सच्ची बात यह है कि देवी-देवताओं के पुजारी मायावादी होते हैं। मायावादी चाहे जिस भी देवता की पूजा करे अथवा अन्न नैवेद्य अर्पण करें, देवता उसको ग्रहण नहीं करते। उनका दिया हुआ देव प्रसाद ग्रहण करने से, भक्ति की हानि होती है और भक्ति देवी के प्रति अपराधी होना पड़ता है। यदि कोई कृष्ण भक्त भगवान् श्रीकृष्ण को भोग में दिया हुआ प्रसाद, दूसरे देवी-देवताओं को अर्पण करता है तो वह देव-देवियाँ उसे पाकर नृत्य करने लगती हैं। फिर वही प्रसाद वैष्णवजन पाकर आनंद लाभ करते हैं।

दूसरे जो लोग देव–देवियों को प्रसाद अर्पण करते है वह कोई न कोई कामना लेकर ही ऐसा करते हैं। वे देव–देवियों से बदले में कुछ मांग रखते हैं। वह उन्हें प्रसाद देकर लूटना चाहते हैं। यहाँ तक कि एक रुपये का प्रसाद देकर कई लाख रुपये तक की चीज़ उस देव–देवी से मांगते हैं। यह प्रसाद भी वैष्णव लोग ग्रहण नहीं करते हैं क्योंकि वह कामनाओं से युक्त होता है। ऐसा प्रसाद पाने से भक्ति की हानि होती है।

योगशास्त्र में योगाभ्यासी साधक को दूसरे–दूसरे देवी–देवताओं का प्रसाद ग्रहण करने की मनाही की गई है । इसका अर्थ यह नहीं कि योगी दूसरे देवताओं के प्रसाद के प्रति अश्रद्धा का भाव रखते हैं। बल्कि योग साधन में प्रसाद का त्याग करने से ध्यान को एकाग्र करने में बड़ी सहायता मिलती है। इसी प्रकार भक्ति साधन में भी उपास्य भगवान् के प्रसाद को छोड़कर, दूसरे देवी–देवताओं के प्रसाद को ग्रहण करने से अनन्य भक्ति की हानि होती है।

यह कहना या समझना बिल्कुल भूल है कि वैष्णव लोग दूसरे देवी–देवताओं के प्रसाद से घृणा करते हैं। अपने प्रयोजन की सिद्धि के लिये हर कोई प्रयत्न करता है। सच्ची बात तो यह है जो ऐसा कहते हैं वे भूल में हैं क्योंकि उनको भगवान् के बारे में, देव–देवियों के बारे में, उनके आपस के संबंध के विषय में कोई ज्ञान नहीं है। अपने स्वार्थ की पूर्ति करने में अंधे होकर, वे देव–देवियों के दर पर ठोकरें खाते फिरते हैं। वे परमेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण, जो कि सभी देव–देवियों एवं भूत प्राणियों के स्वामी हैं, को नहीं मानते हैं। उन्हें इस बात का भी ज्ञान नहीं होता कि भगवान् को प्रसाद अर्पण करने से सभी देव–देवियों को प्रसाद मिल जाता है। जिस प्रकार वृक्ष की जड़ में जल देने से सभी डाल, पत्र, फल, फूल तृप्त हो जाते हैं। पेट

में रोटी देने से जैसे शरीर के सभी अंगों की तृप्ति हो जाती है, उसी प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा करने से भगवान् के सभी अंग, जो देव-देवियाँ और जीव समूह हैं, की सेवा हो जाती है। श्रीमद्भगवद् गीता के 11 वें अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने विराट स्वरूप में सभी देव-देवियों और जीवसमूह को अपने में दर्शाया है। भगवान् का कीर्तन करने से सभी का कीर्तन व सेवा हो जाती है। इसलिये हमेशा यह कीर्तन करें :-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

- 48 -

माया में फँसे जीव के चित्त की हालत

27.08.1979

जीव की उत्पत्ति अनादि काल से हुई है क्योंकि यह स्वरुप से ही नित्य है। यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि जीव कब से माया के संसार में चक्कर काट रहा है। कभी दु:खी तो कभी सुखी, कभी राजा तो कभी प्रजा, कभी जानवर तो कभी देवता, कभी मनुष्य तो कभी वृक्ष इत्यादि। इस कारण से जीव अनादि काल से ही माया में फँसा हुआ है। जब से वह माया में फँसा, तभी से इसका कार्य शुरु हो गया था। इसलिये इसके कर्म भी अनादि है।

अनादि काल से ही जीव अच्छे और बुरे कर्म करता आ रहा है। इन सभी कर्मों का फल जीव के चित्त को मलीन किये हुये है। मनुष्य योनि ही कर्म योनि है। बाकी सब योनियाँ भोग योनियाँ हैं।

मनुष्य जो कर्म भोग करता है, वह प्रारब्ध कर्म है। जो अच्छे-बुरे कर्म करता है, वह भी संचित कर्मों से मिल जाते हैं। इन सभी कर्मों का रंग चित्त पर चढ़ता रहता है। इन अच्छे-बुरे कर्मों के संस्कारों के संघर्ष से चित्त में आग लगी रहती है। जो हर समय सुलगती रहती है। चित्त हर समय अशांत रहता है। बाहर से भले ही कोई शांत दिखाई दे यदि उसके चित्त को खोल कर देखें तो पता चल जायेगा कि उसके चित्त में कितनी आग लगी हुई है और उसके चित्त में विषयों के प्रति कितने मसले (Problems) घर किये बैठे हैं जिस कारण उसका चित्त हमेशा चंचल है। जैसे कई दफा वृक्षों के संघर्ष से ही जंगल में आग लग जाती है बाहर से उसे कोई नहीं लगाता। वह आग जंगल को जला कर भस्म कर देती है और उसका कोई नामोनिशान तक नहीं रहने देती। इसी प्रकार चित्त में लगी आग भी जीव के स्वरूप धर्म अर्थात् भगवान् की नित्य दासता को नष्ट कर देती है। जीव अपने स्वरूप धर्म नित्य दासता को भूल कर माया का दास बन जाता है। जिस प्रकार जंगल में लगी आग लगातार मूसलाधार वर्षा होने पर ही बुझ सकती है, दूसरे साधनों द्वारा नहीं। इसी प्रकार चित्त में लगी आग लगातार हरिनाम संकीर्तन द्वारा ही बुझ सकती है दूसरे साधन योग, दान, कर्म इत्यादि इसे शांत नहीं कर सकते। चित्त में कर्मों के संस्कारों से लगी हुई आग को शांत करने की एकमात्र अमोघ दवाई हरिनाम संकीर्तन ही है। जो मायाबद्ध जीव इस चित्त में लगी आग को बुझाना चाहता है और शांति लाभ करना चाहता है वह निरंतर हरिनाम संकीर्तन करें। ज्यों-ज्यों जीव का चित्त हरिनाम करते-करते धुलेगा त्यों-त्यों चित्त की आग शांत होती जायेगी और वह उसी मात्रा में शांति लाभ करता जायेगा। जब कर्म के मल से चित्त पूरी तरह से साफ हो जायेगा तो पूर्ण शांति लाभ कर लेगा।

जीव का चित्त, दर्पण की तरह है। जैसे गंदे शीशे में कुछ दिखाई नहीं देता इसी प्रकार गंदे चित्त में भी सामने पड़ी कोई वस्तु दिखाई नहीं देती। जब चित्त का मैल साफ हो जायेगा तो चित्त के निकट जो वस्तु है, वह दिखाई देगी। चित्त के निकट हमारे प्रभु हैं। चित्त के साफ होने से जीव अपने चित्तरूपी दर्पण में अपने प्रभु के दर्शन करेगा जोकि जीव का परम पुरुषार्थ है। इसलिये कल्याणकामी जीव को सर्वदा हरिनाम कीर्तन करना होगा।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

– 49 –

पाप करने की इच्छा न होने पर भी मनुष्य पाप क्यों करता है ?

01.09.1979

माया में फँसे जीव का स्वभाव माया के तीनों गुणों (सात्त्विक, राजसिक और तामसिक) से मिश्रित होता है। किसी जीव में सात्त्विक, किसी में राजसिक तो किसी में तामसिक गुण की अधिक मात्रा होती है। इन तीनों गुणों में अंधकार है। जब सात्त्विक गुण बढ़ता है तो चित्त में प्रकाश रहता है और मनुष्य में अच्छेपन का अभिमान होता है जैसे कि मैं धर्मात्मा हूँ, मैं पंडित हूँ इत्यादि। जब रजोगुण बढ़ता है तो चित्त में इच्छाओं का अंबार खड़ा हो जाता है। रजोगुणी मनुष्य ही विषयी होता है। जब तमोगुण बढ़ता है तो जड़ शरीर में अहं बुद्धि होती है। ऐसा मनुष्य जड़ शरीर में लिप्त होता है।

रजोगुण से प्राकृत काम की उत्पति होती है। काम से यह तात्पर्य है जड़ इन्द्रियों की विषयों के प्रति चाह ।

आत्म इन्द्रिय प्रीति वांच्छा तारे बले काम।
कृष्ण इन्द्रिय प्रीति वांच्छा धरे प्रेम नाम।।

इन्द्रियों के विषय-भोगों को काम कहते हैं। इससे जाना जा सकता है कि काम का वास इन्द्रियों में है। इन्द्रियां ही मन, बुद्धि की चालक हैं इसीलिये काम का वास मन, बुद्धि में ही है। इस दुष्ट काम का वास इन्द्रियों, मन, बुद्धि में सूक्ष्म रूप से है। इसलिये इन्द्रियों, मन और बुद्धि का मुख विषयों की तरफ है। गोपाल तापनी पूर्व भाग 12-13 ग्रंथ में कहा गया है कि स्वयं प्रकट होने वाले परमेश्वर ने समस्त इन्द्रियों को बाहर की ओर जाने वाली ही बनाया है इसलिये जीव इन्द्रियों द्वारा प्राय: बाहर की वस्तुओं को ही देखता है। वह अपने हृदय में विराजमान भगवान् को नहीं देख पाता। कोई-कोई धीर व्यक्ति ही कृष्ण-प्रेम पाने की इच्छा से नेत्र आदि इन्द्रियों को बाहर के विषयों से हटाकर भगवान् को देख पाते हैं।

इन्द्रियों की विषयों के प्रति चाह को, जीव जब पूरा करने जाता है तो उसकी कोई इच्छा पूरी हो जाती है और कोई पूरी नहीं हो पाती। जो इच्छा पूरी हो जाती है उसके प्रति लोभ और मोह पैदा हो जाता है । (प्राप्त वस्तु के नष्ट होने की आशंका को मोह कहते हैं।) जो इच्छा पूरी नहीं होती या जिस कामना में विघ्न पड़ जाता है तो उससे क्रोध पैदा हो जाता है। क्रोध से बुद्धि में अज्ञान छा जाता है और उस इच्छा की पूर्ति करने में जीव पाप करने लगता है। इसलिये यह रजोगुण से पैदा हुआ काम ही पाप का कारण है। मनुष्य इस दुष्ट काम से बंधा हुआ है, इच्छा न होने पर भी पाप में लग जाता है। काम से पैदा हुये क्रोध, लोभ, मोह ही जीव के पतन

का कारण हैं। भगवान् श्रीकृष्णचंद्र ने गीता में कहा है कि क्रोध, लोभ, मोह नरक के तीन दरवाजे हैं। इसलिये यह दुष्ट काम ही नरक का कारण है। जिस हमें छोड़ना होगा। इस काम को छोड़ने के लिये हमें इन इन्द्रियों को भगवान् की तरफ लगाना पड़ेगा। जिह्वा को भगवान् का प्रसाद पाने, हरिनाम कीर्तन करने, भगवान् की लीला-कीर्तन में, नेत्रों को भगवान् और उनके धाम, भगवद्-वस्तु के दर्शन करने में, कानों को हरिकीर्तन श्रवण में, नाक को भगवान् के चरणों में अर्पित तुलसी की सुगंध लेने में, मन को भगवान् की लीला का मनन करने में, चित्त को भगवान् की लीला चिंतन में, बुद्धि को भगवान् के साथ जुड़ने में, कर्म इन्द्रियों को भगवान् की सेवा करने में, हाथों को भगवान् का मंदिर साफ करने में, पैरों को मंदिर की परिक्रमा करने में लगाना पड़ेगा। स्थूल शरीर से भगवान् को दण्डवत् प्रणाम करना, देह-देही से भगवान् की शरण ग्रहण करना, भगवान्, भक्त, भक्ति शास्त्रों का संग करना, भक्त-भगवान् का चरणामृत, प्रसाद, चरणधूलि का सेवन करना इत्यादि भक्ति के अंग हैं। इस तरह धीरे-धीरे भक्ति के अंगों का पालन करते-करते काम का बल क्षीण होता जायेगा और चित्तबल बढ़ता जायेगा। जब चित्तबल पूरा बढ़ जायेगा तो यह दुष्ट काम बिल्कुल नष्ट हो जायेगा। तभी इन्द्रियों की प्रीति, भगवान् की प्रीति में बदल जायेगी। जिसका नाम काम की बजाय प्रेम में बदल जायेगा। तभी मन, चित्त, बुद्धि शांति लाभ करेंगे और किसी साधन से यह दुष्ट काम पर विजय प्राप्त नहीं कर सकेंगे। यह काम रोग ही हृदय रोग है। इस रोग को यदि नष्ट करना चाहते हो तो साधु-संग में सर्वदा इस महामंत्र का संकीर्तन करें।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

जैसे यदि हाथ की हथेली में खुजली हो तो खुजली करने पर आनंद सा मिलता है। बार-बार और खुजली करने की इच्छा होती है। इसी प्रकार विषय सुख भी ऐसा ही है । जितना मनुष्य विषय का सेवन करता है, विषयों को भोगने की उतनी लालसा बढ़ती जाती है। यही लालसा जीव के दु:ख का कारण है और नरक का दरवाजा है । यह दुष्ट काम ही इन्द्रियों को विषय सुख में लगाता है जो कि दु:ख का कारण है।

* * *

\- 50 -

भगवान् की कृपा द्वारा ही भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः।
अनादिरादिर्गोविन्द सर्वकारण कारणम्।।

कृष्ण परमेश्वर हैं, सत्-चित्त-आनंद की मूर्ति हैं उनका कोई आरंभ नहीं। सारे कारणों के एकमात्र कारण गोविन्द हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जब विराट स्वरूप दिखाया तो अर्जुन ने उस रूप में सभी देवता, सिद्ध, किन्नर एवं भूत प्राणियों को देखा जो इस बात की पुष्टि करता है कि भगवान् श्रीकृष्ण ही सभी के कारण हैं और उनका कोई कारण नहीं है। कोई भी भगवान् श्रीकृष्ण से न तो बड़ा है और न उनके बराबर है। भले कोई देवता ही क्यों न हो, भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा के बिना उन्हें कोई जान नहीं सकता। जैसे सूर्य को किसी भी यत्न या उपाय से रात को नहीं देखा जा सकता। सूर्य जब चढ़ता है तभी सूर्य की किरणों द्वारा ही सूर्य को

देखा जा सकता है। इसी प्रकार भगवान् को भी भगवान् की कृपा द्वारा ही देखा जा सकता है। भगवान् जिस पर कृपा करते हैं उसके पास वे आत्म प्रकाश कर देते हैं तभी वह जीव भगवान् के दर्शन करने की योग्यता लाभ करता है। अपनी ताकत से कोई भी जीव भले वह कोई देवता ही क्यों न हो, भगवान् को प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिये कल्याणकामी जीव को सर्वदा भगवान् के आगे कृपा प्रार्थना करते रहना चाहिये।

कलियुग के प्रभाव से अभी बहुत से ऐसे मत आ गये हैं जो ऐसा प्रचार करते हैं कि आप इस मंत्र का जाप करें–"अहं ब्रह्मास्मि" तो आप ब्रह्मा बन जायेंगे। कुछ ऐसे भी मत हैं जो यह कहते हैं कि एक मिनट में आपको भगवान् के दर्शन करा देगें। अज्ञानी लोग उनकी बातों में फँसकर अपना सर्वनाश कर रहे हैं। जो ऐसा प्रचार करते हैं वह अपनी आत्मा की वंचना तो करते ही हैं, साथ ही दूसरों को अपराधी बनाकर उनका भी सर्वनाश करते हैं। जीव चिद्कण है वह कभी भी पूर्ण के बराबर नहीं हो सकता। (Part can not be equal to whole) जीव की क्या हिम्मत कि वह भगवान् को देख सके और किसी को दिखा सके! जो यह कहते हैं कि एक मिनट में भगवान् को दिखाया जा सकता है, वे बिल्कुल झूठ कहते हैं। केवल वैष्णव लोग ही कृपा करके माया में फँसे जीव को भगवान् के अर्पण करके भगवत् प्राप्ति का साधन बता सकते हैं जिससे जीव चिद् प्राप्त करके माया के बंधन से मुक्त हो सकता है। साधन द्वारा ही बंधन को नष्ट किया जा सकता है। कलियुग का एकमात्र साधन है "हरिनाम संकीर्तन"। नारद पंचरात्र में कहा गया है–

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा।।

कलियुग में केवल हरिनाम, हरिनाम, हरिनाम ही एकमात्र गति है इसके बिना और गति नहीं है, नहीं है, नहीं है । कलियुग में अनेक दोष हैं किन्तु इसमें एक महान् गुण यही है कि श्रीहरिनाम संकीर्तन द्वारा जीव संसार बंधन से मुक्त होकर परमधाम की प्राप्ति कर सकता है। इस गुण के कारण गुणग्राही जीव कलियुग को चारों युगों से श्रेष्ठ मानते हैं। कलियुग में केवलमात्र श्रीहरिनाम संकीर्तन द्वारा ही सभी अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति की जा सकती है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष और सबसे परे पंचम् पुरुषार्थ–श्रीकृष्ण प्रेम की प्राप्ति भी की जा सकती है। इसलिये सर्वदा इस महामंत्र का कीर्तन करना चाहिये ।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

* * *

जैसे अग्नि से अनेकों चिनगारियाँ उड़ती हैं उसी प्रकार समस्त आत्माओं के भी आत्मा–स्वरूप श्रीकृष्ण से समस्त जीव उत्पन्न हुए हैं। इसलिए भगवान श्रीकृष्ण के अंश होने के कारण हमारा मूल स्वभाव श्रीकृष्ण की सेवा करना है।

(विष्णु पुराण)

– 51 –

समाधि

07.09.1979

गोपाल तापनी ग्रंथ में वर्णन है कि स्वयं प्रकट भगवान् ने सभी इन्द्रियों को बाहर की ओर जाने वाली बनाया है, इसलिये मायाबद्ध जीव इन्द्रियों द्वारा बाहर की वस्तुओं को ही देखते हैं। वे अपने हृदय में विराजमान भगवान् को नहीं देख पाते। मन की चालक इन्द्रियाँ हैं, इसलिये मन की गति भी बाहर की ओर विषयों की तरफ रहती है। चित्त भी हमेशा विषयों का चिंतन करता है और बुद्धि भी विषयों की देख-रेख और उन्हें बढ़ाने में मग्न रहती है। कहाँ तक कहा जाए! जीवन भर यह शरीर तो विषयों के संग्रह में ही लगा रहता है। अंत में मर कर फिर संसार चक्कर में आकर चौरासी लाख योनि भोगता है और बार-बार इसी तरह संसार चक्कर में घूमता रहता है।

बार-बार विषयों का चिंतन करने से, विषय चित्त में घर कर लेते हैं और चित्त में विषयों के प्रति राग पैदा होने से चित्त चंचल हो जाता है। चंचल चित्त से समाधि नहीं लग सकती। इसलिये जो यह कहता है कि मैं समाधि में हूँ, वह बिल्कुल झूठ बोलता है। वह अपने आप को धोखा देता है और दूसरों को भी धोखा देता है। जब वही राग विषयों से हट कर भगवान् में लग जाता है तो विषयों में राग के अभाव से चित्त शांत हो जाता है तब कहीं समाधि लग सकती है।

भगवान् के प्रति राग कब होगा? जब इन्द्रियाँ बाहर की वस्तुओं को देखने की बजाय भीतर में विराजमान परमेश्वर को देखना शुरु

कर देंगी। इसलिये इन इन्द्रियों को भक्त–भगवान् और भक्ति शास्त्रों की सेवा में नियोजित करना होगा। जितने प्रतिशत जीव की इन्द्रियाँ भक्त–भगवान् और शास्त्रों की सेवा में लग जायेंगी उतने प्रतिशत हम लोगों का मन, बुद्धि और चित्त विषयों से ऊपर उठ जाएगा और उतने प्रतिशत चित्त शांति लाभ करके हम समाधि में बैठ सकेंगे। जब पूरी तरह से इन्द्रियाँ भगवान् की सेवा में लग जायेंगी तब पूरी समाधि लग सकेगी। नहीं तो, कभी समाधि लग ही नहीं सकेगी।

सभी इन्द्रियों को भगवान् की सेवा में लगाने का एकमात्र सरल उपाय कलियुग में श्रीहरिनाम संकीर्तन निर्धारित किया गया है। नाम कीर्तनकारी की सभी इन्द्रियाँ भगवान् की सेवा में लग जाती हैं। दूसरे साधन करने की जरूरत ही नहीं है। इसलिये कल्याणकामी जीव को सर्वदा साधु संग में श्री हरिनाम का संकीर्तन करना चाहिये जिससे उस जीव का बहुत जल्दी कल्याण हो सके। इसके लिये सर्वदा इस महामंत्र का कीर्तन करें।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

* * *

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा।
आद्यन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते।।

(हरिवंश)

वेद, रामायण, महाभारत और पुराणों में आदि, मध्य और अन्त्य में सर्वत्र ही एकमात्र श्रीहरि का ही कीर्त्तन किया गया है।

– 52 –

निष्काम कर्म

07.09.1979

कई लोग प्रायः यह कहते हैं कि हमें अच्छे कर्म करने चाहियें, दूसरों का भला करना चाहिये, अपनी जो ड्यूटी है उसे अच्छी तरह से करना चाहिये इत्यादि यही भक्ति है। भगवान् का भजन करने की कोई जरूरत नहीं। भगवान् श्रीकृष्ण ने भी श्रीमद्भगवद्गीता में यही उपदेश दिया है कि कर्म करो और फल मुझ पर छोड़ दो।

भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में जो कहा है वह बिल्कुल ठीक है परंतु हम उसका अर्थ ग़लत निकाल लेते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने जो कर्म के बारे कहा है, वह निष्काम कर्म के बारे कहा है। निष्काम का अर्थ है कामरहित। काम का अर्थ है–इन्द्रियों की विषयों से तृप्ति। निष्काम कर्म का अर्थ हुआ–कर्म जिससे अपनी इन्द्रियों की तृप्ति न हो ऐसे कर्म को निष्काम कर्म कहते हैं। उदाहरण के तौर पर श्री हनुमान जी ने लंका को आग लगाकर कितने ही जीवों की हत्या कर दी थी। यदि संसार की दृष्टि से देखा जाये तो उन्होंने कितना घोर पाप कर्म किया था और इसके लिये हनुमान जी को पाप का भागी होना चाहिये था। परंतु ऐसा नहीं हुआ क्योंकि उनकी यह सब क्रिया निष्काम कर्म थी। उनका कर्म अपनी इन्द्रियों की तृप्ति न करके भगवान् श्रीराम की इन्द्रियों की तृप्ति करना था। भगवान् श्रीराम का यह प्रिय कार्य था। इसलिये वह कर्म उन्हें बांध न सका। वे सर्वपूज्य बन गये। यह निष्काम कर्म है। ऐसे ही कर्म के विषय में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है। जो कर्म भगवान् के लिये

किया जाता है वह काम नहीं, वह प्रेम कहलाता है। जैसा कि चैतन्य चरितामृत में वर्णन है :-

आत्म इन्द्रिय प्रीति वांच्छा तारे बले काम।
कृष्ण इन्द्रिय प्रीति वांच्छा धरे प्रेम नाम।।

माया में बद्ध जीव जब तक माया के तीन गुणों सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण के मल को धो कर अपने मलिन चित्त को साफ नहीं कर लेता तब तक उससे निष्काम कर्म हो ही नहीं सकता। जिसे वह अच्छा कर्म कहता है वह भी माया के गुणो के मल से दूषित होगा। वह जीव अपनी डयूटी में भी पूरा नहीं उतरता। अज्ञानवश ही वह ऐसा अनुमान लगाता है कि वह अच्छे कर्म करता है। उसका वह कार्य काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और स्वार्थ से लिप्त होता है। ऐसे कर्मों से जीव पाप-पुण्य का भागीदार होगा।

जब चित्त सत्तोगुण, रजोगुण, व तमोगुण के मल से निर्मल होगा तभी उससे निष्काम कर्म हो सकेगा। यह तीन गुणों का मल चित्त पर जन्म-जन्मांतरों से चढ़ता आ रहा है और यह इतनी जल्दी नहीं धुलेगा। इसके लिये तीव्र अभ्यास करना पड़ेगा। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपने शिक्षाष्टक में चित्त को मार्जन करने का एकमात्र उपाय श्रीहरिनाम-संकीर्तन ही बतलाया है।

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्नि-निर्वापणं,
श्रेयःकैरवचन्द्रिका वितरणं विद्यावधू-जीवनम्।
आनन्दाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं,
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्ण-संकीर्तनम्।।

''श्रीकृष्ण नाम संकीर्तन जीव के चित्तरूपी दर्पण को मार्जन करने वाला है, संसार-त्रितापरूप महा दावानल को बुझाने वाला है, सर्व मंगल रूप कुमुद पुष्प के लिये ज्योत्सना वितरण करने वाला

है, विद्यारूप वधू का प्राण स्वरूप है और आनन्द सागर की वृद्धि करने वाला है। इसके प्रतिपद में ही पूर्णामृत का आस्वादन है। यह सर्व इन्द्रियों की तृप्ति विधान करने वाला है। श्रीकृष्ण नाम संकीर्तन इस प्रकार सर्वोत्कर्ष से विजययुक्त होकर विराजमान है।''

जैसे दर्पण पर बार-बार कपड़ा रगड़ने से, वह साफ हो जाता है इसी प्रकार बार-बार श्रीहरिनाम कीर्तन करने से यह चित्त रूपी दर्पण साफ होगा। बार-बार श्रीहरिनाम कीर्तन करने से ही चित्त का मल साफ होगा नहीं तो वर्तमान कर्मों का मल साथ-साथ चित्त पर चढ़ता जाएगा। जब तीन गुणों के मल से चित्त साफ हो जायेगा तो फिर कर्मों का मल नहीं चढ़ेगा क्योंकि तब निष्काम कर्म होने शुरु हो जायेंगे। इसलिये चित्त को साफ करने के लिये हमेशा नीचे दिये गये महामंत्र का बार-बार कीर्तन करो। इससे चित्त बहुत जल्दी साफ हो जायेगा।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण
कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम हरे राम
राम राम हरे हरे

करेंगे-करेंगे-करेंगे इसमें शंका है किन्तु मरेंगे-मरेंगे-मरेंगे इसमें कोई शंका नहीं है इसलिए आगे की यात्रा की तैयारी समय रहते कर लेनी चाहिए क्योंकि वैराग्य की भूमि पर ही ज्ञान, भक्ति का बीज उदय होता है।

(सन्त वाणी)

– 53 –

क्या देवी-देवताओं का संग भव-सागर से पार कराने के लिये सहायक है ?

कभी नहीं ।

माया से बद्धजीव में चार प्रकार के अनर्थ रहते हैं–

(i) स्वरूप को भूलना – ''मैं शुद्ध चित्तकण कृष्ण का दास हूँ'' इस बात को भूल कर जीव अपने स्वरूप से बहुत दूर हो गया है।

(ii) असत् आशा-तृष्णा – जड़ पदार्थों में मैं और मेरे की बुद्धि करने से जो झूठे विषय सुखों की तृष्णा होती है, उसे असत् आशा तृष्णा कहते हैं। पुत्र की कामना, धन की कामना और स्वर्ग की कामना-यह तीन प्रकार की असत् आशा तृष्णा हैं।

(iii) हृदय दुर्बलता – असत् वस्तु की प्राप्ति और उसके नष्ट होने पर शोक आदि का पैदा होना – यह हृदय की दुर्बलता से होता है।

(iv) अपराध – नाम भगवान् के प्रति अपराध, भगवान्, भक्त और भक्ति शास्त्र के प्रति अपराध।

ज्ञान इन्द्रियों द्वारा जो ग्रहण किये जाते हैं उन्हें इन्द्रियों के विषय कहते हैं। देव योनि, नरक, पशु, पक्षी, जानवर इत्यादि योनि यह सब भोग योनियां हैं। केवल मनुष्य योनि ही भोग और कर्म योनि है। सभी जीव, चाहे वे देव योनि में हों या मनुष्य योनि में, चाहे पशु-पक्षी आदि योनि में हों, यह सब मायाबद्ध जीव हैं। इसलिये उनमें ऊपर दिये गये चार तरह के अनर्थ रहना स्वाभाविक है।

देवयोनि में, इन्द्रियों के विषय स्थूल रूप में और अधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इसलिये देवता लोग विषयों का संग स्थूल रूप से करते हैं और इसीलिये वे विषयी होते हैं। बद्धजीव में विषयों के लिये तृष्णा रहती है। जब वह विषयों के बारे में स्वर्ग की रंग-बिरंगी कहानियाँ सुनता है तो उसका चित्त विषयों को प्राप्त करने के लिये लालायित हो उठता है और वह देवी-देवताओं का संग प्राप्त करने के लिये कोशिश करता है। जितना वह संग करता है उतना ही उसका चित्त विषयों में लग जाता है और उसकी बहिर्मुखता बढ़ने लगती है जिससे उस जीव का माया बंधन पक्का हो जाता है। विषयों का संग, विषयी का संग-असत्संग है। जिस प्रकार विषयी पुरुष का संग, साधक (जो भगवान् श्रीकृष्ण की चरण सेवा के लिये साधना करता है) के लिये निषेध है, उसी प्रकार देवी-देवताओं का संग, जो विषयों का संग स्थूल रूप से करते हैं, साधक के लिये निषेध है। विषयों के प्रति इन्द्रियों का राग होने से ही चित्त विषयों की तरफ जाता है। जब बद्धजीव घोर विषयी पुरुषों या देव-देवियों का संग करेगा तो उसका चित्त विषयों में स्वाभाविक ही फँस जायेगा और वह सत्संग लाभ नहीं कर सकेगा। जो जीव भवसागर को पार करना चाहता है, उसे विषयी पुरुषों का संग और विषयों की प्राप्ति के लिये कोशिश को छोड़ना होगा।

जहाँ तक देवी-देवताओं को प्रणाम करना और सम्मान देने की बात है, वह अवश्य देना चाहिये । साधक को हर जीव को चाहे वह देव योनि में हो, मनुष्य योनि में हो, पशु-पक्षी आदि योनि में हो, प्रत्येक में भगवान् को अन्तर्यामी रूप में विराजमान जान कर सम्मान देना चाहिये। श्री चैतन्य महाप्रभु जी द्वारा प्रदान शिक्षाष्टक का तीसरा श्लोक हमें शिक्षा देता है :-

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः।।

साधक को हर एक को सम्मान देने और अपना मान नहीं चाहने के बारे में कहा है। इस श्लोक में साधक को तृण से भी अधिक नीच और वृक्ष से भी अधिक सहनशील होने के विषय में कहा गया है। इन चारों गुणों से गुणी होने पर ही कीर्तन हो सकेगा, नहीं तो नहीं होगा।

बद्धजीव की विषयों के प्रति मांग स्वाभाविक है। सत्संग में रहकर हरिभजन कीर्तन करने से जीव की जितनी मात्रा में बहिर्मुख दशा समाप्त होगी उतनी मात्रा में अनर्थ खत्म हो जायेंगे। यदि साधक सत्संग भी करता है और साथ-साथ विषयी लोगों का संग भी करता है तो उसकी अनर्थों से निवृति नहीं होगी। इसलिये हम लोगों को हर समय चित्त को विषयों के चिंतन से हटा कर, भगवान् श्रीहरि का कीर्तन करना चाहिये। यदि अपना कल्याण चाहते हो तो सत्य वस्तु को जानने की कोशिश करनी चाहिये। सत्य वस्तु को जान कर भजन में बढ़ने की कोशिश करनी चाहिये। तथा हमेशा नीचे दिये गये महामंत्र का कीर्तन करना चाहिये -

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

परनिन्दा-रहित होकर जो एक बार 'श्रीहरिनाम' उच्चारण करता है, श्रीहरि निश्चय उसका निस्तार करते हैं। भक्तों के चरणों पर दृष्टि रखने से श्रीभक्तिरानी के राज्य का पथ दीखता है।

(सन्त वाणी)

– 54–

बद्धजीव की तुलना सूर्य की किरणों से

सूर्य की किरणों की तरह जीव असंख्य हैं। जिस प्रकार किरणें सूर्य से निरन्तर निकलती रहती हैं इसी प्रकार महाविष्णु के मुख से जीव निरंतर निकलते रहते हैं। किरणों का उत्पति स्थान सूर्य है, सूर्य के बिना किरणें नहीं रह सकती पर सूर्य अकेले में रह सकता है। इसी प्रकार अनंत जीव जिनकी तुलना सूर्य की किरणों से की गई है, भगवान् के बिना नहीं रह सकते। भगवान् अकेले में रह सकते हैं। जबकि सारी किरणें सूर्य की हैं, सूर्य से हैं, सूर्य में हैं फिर भी सभी इकट्ठी होकर सूर्य नहीं बन सकती। इसी प्रकार सभी जीव भगवान् के हैं, भगवान् से हैं, भगवान् में हैं पर फिर भी यह सभी मिल कर भगवान् नहीं बन सकते ।

कई लोगों की धारणा है कि जीव ब्रह्म बन सकता है उन लोगों की यह धारणा अज्ञान के कारण है । जीव ब्रह्म के साथ लय को तो प्राप्त कर सकता है परंतु इसका मतलब यह नहीं कि जीव ब्रह्म हो जायेगा। वे लोग प्राय: यह उदाहरण देते हैं कि पानी का एक बिन्दु यदि सागर में मिल जाये तो वह सागर ही बन जाता है। जोकि ऐसा नहीं बल्कि पानी की एक बूँद समुद्र की अगाध जलराशि का एक अंशमात्र है। जल की एक सीमित बूँद, असीमित सागर नहीं कही जा सकती। जबकि देखने व सुनने में भी आता है कि ''समुद्र का एक बिन्दु'' पर कोई यह नहीं कहता कि एक बिन्दु का सागर। इसी प्रकार जीव ब्रह्म का ही अंश कहा जायेगा न कि यह कहा जायेगा कि जीव ही ब्रह्म है। ब्रह्म में लगे हुये जीव अपनी चेतनता को खो

कर एक तरफ पड़े रहते हैं। उनमें न कोई इच्छा, न कोई क्रिया, और न कोई अनुभूति होती है पर उनका अपना अस्तित्व बना रहता है। भगवान् कृष्ण के हाथों मारे गये अनेक राक्षस, दुष्टजन ब्रह्म को प्राप्त होते हैं। पर जो आनंद भगवान् की दासता में है वह ब्रह्मानंद से कोटिगुणा बढ़ कर है इसलिये ऐसी दासता के लिये हमें हमेशा इस महामन्त्र का कीर्तन करना चाहिये-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

* * *

- 55 -

कीर्तन की महिमा

कीर्तन का मतलब है कीर्ति व यश गान करना । मायावद्ध जीव हमेशा विषयों का कीर्तन ही करता है, वह जीव विषयों के बारे में ही सबसे चर्चा करता है । चाहे वह कोई संबंधी हो, दोस्त हो वा देवी देवता ही क्यों न हो। यही कारण है कि उसके चित्त में विषय घर कर जाते हैं। आँख का विषय है-देखना। जैसाकि सुंदर रूप, दृश्य, नृत्य, पिक्चर सिनेमा आदि। कान का विषय है-सुनना जैसाकि मधुर गीत, साज़-बाजे और अपनी प्रशंसा आदि। नाक का विषय है -सूंघना जैसे कि लुभाने वाले खुशबूदार तेल, साबुन, पाउडर आदि। जिह्वा का विषय है- स्वाद। बढ़िया खाना-पीना, किसी की बात करना, कहना आदि। त्वचा का विषय है- स्पर्श-सुख। सन्दर-सुन्दर कोमल गद्दे, स्त्री संग, सोफे, बढ़िया बिस्तर, मकान, कार, स्कूटर इत्यादि। यह पाँचों ज्ञान इन्द्रियों के विषय हैं। मन का विषय है अपनी इच्छा के मुताबिक चलना, उसमें फिर अनुराग होना

इत्यादि। बुद्धि का विषय है विषयों को इकट्ठा करने के लिये प्रयास करना इत्यादि।

यह सभी ऊपर दिये गये विषय मिलकर-काँचन, कामिनी, और प्रतिष्ठा के अन्तर्गत आ जाते हैं। विषयों की चाह बद्धजीव में स्वाभाविक है। इस स्वभाव को तभी बदला जा सकता है जब विषयों के कीर्तन की बजाय श्रीहरि का कीर्तन किया जाये। जब बद्धजीव ऐसा करेगा तो विषयों की बजाय श्रीहरि के नाम, गुण, लीला आदि चित्त में घर कर जायेंगे। फिर तब उस जीव का चित्त, जो विषयों के प्रति राग के कारण चंचल है, शांत हो जायेगा, जोकि प्रत्येक बद्ध जीव की मांग है। परंतु वह शांति की खोज विषयों में करता है जोकि चित्त की अशांति का कारण बना हुआ है। विषयों में सुख की तुलना खुजली से की गई है। यदि खुजली वाली जगह को खुज़लाया जाये तो सुख सा लगता है और ज्यादा खुज़ली करने की इच्छा होती है जबकि खुज़ली का सुख अंत में दु:ख का कारण बन जाता है। इसी प्रकार जो विषयों में आनंद मानकर उनको इकट्ठा करता रहता है, वह अंत में दु:ख भोग करता है। सारी आयु विषयों को इकट्ठा करने में लगाकर अन्त में दु:खी होता है।

मनुष्य जीवन की सार्थकता तभी है यदि वह सत्संग में रहकर श्रीहरि के नाम-गुण-लीला आदि का कीर्तन करे इसी से चित्त में शांति होगी। श्रीहरि-गुरु-वैष्णवों की कृपा से ही सत्संग लाभ हो सकता है जिसके लिये हमेशा उनसे दिल से प्रार्थना करनी चाहिये। शुद्ध संग लाभ होने से विषयों के मल से ढका हुआ चित्त साफ हो जायेगा। श्रीहरि के लिये किया हुआ कीर्तन ही शुद्ध कीर्तन होता है। जिस कीर्तन का फल श्रीहरि की जेब में जायेगा, वही शुद्ध कीर्तन होगा और जिस कीर्तन का फल अपनी जेब में जायेगा वह कर्म बन

जायेगा। इसलिये सर्वदा श्रीहरि के नाम-गुण-लीला आदि का कीर्तन श्री हरि की प्रसन्नता के लिये करना चाहिये। कलियुगी जीवों के लिये उच्च स्वर में नाम संकीर्तन ही निर्धारित किया गया है। क्योंकि कलियुगी जीवों का चित्त विषय मलीनता से काफी गंदा है और दूसरे उनकी आयु भी कम है। इसलिये विषय मलीन चित्त उच्च स्वर से नाम संकीर्तन द्वारा ही सत्संग में लग सकता है। इसलिये हे बद्धजीवों! यदि कल्याण चाहते हो तो हमेशा श्रीहरि के इस नीचे दिये गये महामंत्र का उच्च स्वर में संकीर्तन किया करो :-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

निताई गौर हरि बोल ।

***

श्रीनाम-संकीर्त्तन से समस्त पाप नाश हो जाते हैं। जाने-अनजाने श्रीनाम-संकीर्त्तन अपना फल प्रदान करता है। श्रीनाम-संकीर्त्तन किसी विधि-निषेध की अपेक्षा नहीं रखता। सर्वावस्था, सर्वकाल में श्रीनाम संकीर्त्तन किया जा सकता है।

(सन्त वाणी)

हरि-कथा पापी से पापी व्यक्ति को भी पुण्यात्मा बना देती है। जीवन में सत्संग नहीं होगा तो आदमी कुसंग जरूर करेगा। कुसंगी व्यक्ति कुकर्म कर अपने को पतन के गर्त में गिरा देता है।

(श्रीमद् भागवत पुराण)

– 56 –

बंधनों में फँसा जीव अपने आप भजन में नहीं लग सकता

04.10.1979

जीव चार प्रकार के बंधनों में बुरी तरह जकड़ा हुआ है –

(i) घर के बंधन में फँसा जीव।

(ii) स्त्री के बंधन में फँसा जीव।

(iii) शरीर रूपी घर में फँसा जीव।

(iv) मन, बुद्धि, चित्त अर्थात् लिंग शरीर में फँसा जीव।

ऊपर दिये गये चार तरह के बंधनों में फँसे जीव अपने आप भजन में नहीं लग सकते और न ही किसी को भजन में लगा सकते हैं। यहाँ तक कि ऐसे सभी जीव मिलकर भी भजन में नहीं लग सकते। भगवान् श्रीहरि का भजन करने का एकमात्र रास्ता है– भगवान्, भक्त और शास्त्र की महत्कृपा अर्थात् साधु–वैष्णव कृपा इत्यादि। जब तक जीव महत् कृपा प्राप्त नहीं करता तब तक वह भगवान् की तरफ जा ही नहीं सकता।

भक्तपद धूलि आर भक्तपद जल।
भक्त भुक्त अवशेष तिन महाबल।
एई तिन सेवा हैते कृष्णे प्रेम हय।
पुनः पुनः सर्वशास्त्रे पुकारिया कय।

भक्त के चरणों की धूलि, भक्त के चरणों का जल तथा भक्त की जूठन– इन तीनों का सेवन करने से ही भक्ति लाभ हो सकती

है। इन तीनों का सेवन करने से ही भवरोग दूर हो जाता है और वह जीव भवसागर को पार करने की योग्यता लाभ कर, पंचम पुरुषार्थ-भगवान् श्रीकृष्ण का प्रेम प्राप्त कर सकता है।

प्रेम के वशीभूत होकर गोविंद भक्त के हृदय में निवास करते हैं। भक्त चलता फिरता भगवान् श्रीहरि का मंदिर है। इसलिये भक्त कृपा को साक्षात् भगवान् की कृपा ही जानना चाहिये। यह अटल सत्य है कि साधु-वैष्णव कृपा से ही भक्ति लाभ की जा सकती है। दूसरे उपायों से भगवान् श्रीहरि के चरणों में भक्ति लाभ नहीं की जा सकती। इसलिये जो कल्याणकामी हैं उन्हें साधु संग में रहकर भजन करना होगा। भक्त ही भक्ति दे सकते हैं। जिसके पास कोई वस्तु है, वही दे सकता है। इसलिये जिसके पास भक्ति है, वही भक्ति दे सकता है। देवताओं में श्रेष्ठ देवता ब्रह्मा जी और शिवजी महाराज जी भक्ति दे सकते हैं। यह दोनों देवता ही भगवान् नारायण और श्री राम के भक्त हैं। भक्ति का अर्थ है-सेवा। भगवान् श्रीहरि के चरणों की सेवा ही भक्ति है। भगवान् श्रीहरि की आज्ञा है कि मेरे नाम का कीर्तन ही मेरी महान् सेवा है। इसलिये साधु-भक्त संग में रहकर भगवान् के मुख्य नाम महामंत्र का संकीर्तन करना चाहिये।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

भगवद्-प्राप्ति के बिना किसी को शान्ति नहीं मिल सकती।

-श्रील गुरुदेव

-57-

माया के कारागार में बद्धजीव क्या क्या कर्म करते हैं ?

माया के कारागार में कैदी जीव दो तरह के काम करते हैं ।

1. माया को भोगने की लालसा के अनुसार जीव ऐसे कर्मो को करता है जिससे वह अपने मन की इच्छा अनुसार भोगों को प्राप्त कर सके।

2. माया की जंजीर में बँधा होने के कारण उसे जो दु:ख मिलते हैं उन्हें दूर करने की कोशिश करता है।

स्थूल शरीर की छः अवस्थाएं होती हैं। यह छः प्रकार के विकार ही इस स्थूल शरीर के धर्म है। भूख-प्यास -यह सब जड़ शरीर की जरुरत है। जड़ शरीर में बँधा शरीर अपनी भोग वासनाओं के द्वारा परिचालित होकर खाने-पीने, निद्रा और संग आदि के अधीन होता है। स्थूल शरीर के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त, वह पाप और पुण्य कर्मो में लगा रहता है। पुण्य कर्म से, स्वर्ग में भोगों को भोगता है और मृत्यु लोक में ब्राह्मण आदि उच्च कुल में जन्म लेकर सुखों को भोग करने की आशा से कर्म मार्ग में लगता है। दूसरी तरफ अधर्म का आश्रय लेकर नाना प्रकार के कर्मो द्वारा इन्द्रिय सुख भोग करता है। पुण्य के प्रभाव से स्वर्ग सुख भोगता है और पाप कर्मो के फलस्वरूप नरक भोगता है। इस प्रकार मायाबद्ध जीव विषय सुखों को भोग करने के लिये कर्म चक्कर में फँसकर इधर-उधर चक्कर काटता रहता है। बीच-बीच में अपने पुण्य कर्मो के फलस्वरूप कुछ नाश होने वाले सुख भोग करता है और पाप कर्मों के फल से दु:ख भोग करता है।

क्षीणे पुण्ये च मर्त्यलोकं विशन्ति

(गीता 9.21)

स्वर्गवासी जन स्वर्गलोक के पुण्य क्षीण होने पर पुनः मृत्युलोक में प्रवेश करते हैं। इस प्रकार भोगों की कामना करने वाले कर्मीजन आवागमन करते रहते हैं।

दूसरे प्रकार के कर्म

स्थूल शरीर में स्थित जीव, स्थूल शरीरगत नाना प्रकार के अभावों के जाल में पड़ कर बहुत ही दुःख पाता है। इन दुःखों को दूर करने के लिये बहुत तरह के कर्म करता है। भूख और प्यास के कष्ट को दूर करने के लिये खाने-पीने की चीजों को इकट्ठा करता है। खाने-पीने की चीज़े आसानी से मिल सकें, इसके लिये जी तोड़कर परिश्रम करता है और धन इकट्ठा करता है। सर्दी से बचने के लिये गर्म कपड़ों को इकट्ठा करता है। इन्द्रिय सुख की वासना मिटाने के लिये शादी करता है। परिवार और संतान आदि का भरण-पोषण के लिये एवं उन के अभावों को दूर करने के लिये अथक परिश्रम करता है । स्थूल शरीर में रोग होने पर उसे दूर करने के लिये दवाई का प्रयोग करता है । विषयों की रक्षा के लिये दूसरों से लड़ाई झगड़ा करता है और अदालत में चला जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य के अधीन हो कर युद्ध, कलह, हिंसा और चोरी आदि पाप कर्मो में लगता है । सुख से वास करने के लिये अच्छे-अच्छे मकान बनाता है। यह सभी कर्म, अभावों को पूरा करने के लिये हैं।

पहले प्रकार के कर्मों से भोगों की लालसा और दूसरे प्रकार के कर्मों से अभावों की पूर्ति के लिये बद्धजीव की सारी आयु निकल जाती है । फिर जन्म होता है, फिर आयु निकल जाती है। इसी

प्रकार जीव विभिन्न योनियों में चक्कर काट रहा है । माया की जंजीर को काटने की एकमात्र कटार है ''हरिनाम संकीर्तन'' । माया की जंजीर काटने पर ही सुख-दुख व अभावों की निवृति हो सकती है । इसलिये निम्न महामंत्र का संकीर्तन हमेशा करना चाहियेः-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

-58-

श्रील गुरुवर्ग की उपदेशावली (1)

❖ दो चार रुपये मठ में देने से, मठ की सेवा नहीं होगी। मठ की यथार्थ सेवा चैतन्य महाप्रभु के सेवक बनने से होगी। जो यह कहता है कि हमारे रुपये पैसे की सेवा से मठ की रक्षा होती है, वह भूल में है। मठ की रक्षा भगवान् श्रीकृष्ण करते हैं। वही मठ के चालक हैं। मायाबद्ध जीव रुपये पैसे की सेवा को सेवा मानता है। जड़ द्वारा चेतन वस्तु की सेवा नहीं हो सकती। चेतन द्वारा ही चेतन की सेवा हो सकती है। इसलिये जीव यदि आत्म जागृति से भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा करे तभी यथार्थ सेवा होगी।

❖ ''कलिकाले नामरूपे कृष्ण अवतार'' कलियुग में नामरुप से ही श्रीकृष्ण का अवतार है।

नाम, विग्रह, स्वरूप, तीन एक रूप।
तिने भेद नाहि, तिन चिदानन्द रूप।

नाम, विग्रह और स्वरुप तीनों एक ही रूप हैं इनमें कोई भेद नहीं है। तीनों चिदानन्द स्वरूप हैं ।

- जैसे तेल की बूंद पानी के एक भाग में पड़ने पर सर्वत्र फैल जाती है, उसी प्रकार मनुष्य के पाप आपस में बातचीत करने से, एक दूसरे के शरीर को छूने से, साँस लेने से, एक साथ बैठकर भोजन करने से दूसरे मनुष्यों में प्रवेश कर जाते हैं।
- मैं ब्राह्मण नहीं, क्षत्रिय नहीं, वैश्य या क्षूद्र नहीं। मैं ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ या संन्यासी भी नहीं। परंतु मैं नित्य स्वतः प्रकाशमान निखिल परमानंद, पूर्ण अमृत-समुद्र स्वरूप गोपीजनवल्लभ श्रीकृष्ण के पदकमलों के दासों का दास हूँ।

* * *

– 59 –

श्रील गुरुवर्ग की उपदेशावली (2)

23.07.1980

- कपटता से भजन करना कर्म है । इससे धर्म, अर्थ, काम की प्राप्ति हो सकती है, परन्तु भगवत् प्राप्ति नहीं होगी।
- श्रीहरि-गुरु-वैष्णव ही जीव के बन्धु हैं, अन्य सभी ही माया में बंधन के कारण हैं।
- निष्कपटता एवं सरलता ही वैष्णवता की निशानी है ।
- आचरण को छोड़कर नाम प्रचार करना कर्म है ।
- चापलूसी कपटता की निशानी है। चापलूसी करने वाला प्रचारक नहीं हो सकता।
- प्रचारक को आचरणवान होना चाहिये।
- निष्कपट भाव से भजन करने से ही भगवत् प्राप्ति होगी ।
- श्रीहरि-गुरु-वैष्णव के आनुगत्य में गुरु-परंपरा को लेकर भजन करना चाहिये।

- गृहस्थ वैष्णव को विषय भोग, अनासक्त भाव से भोगने चाहिये। विषय भोग इतना दूषित नहीं है जितना कि विषय में आसक्ति।
- अनुकूल भाव से भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा ही भक्ति है ।
- महाभागवत हर स्थान पर श्रीहरि के दर्शन करता है इसलिये वह जगत्-गुरु है। ऐसा महाभागवत् भगवान् श्रीकृष्ण तत्त्व को जानने वाला होता है, इसलिये वह जगत्गुरु और जगत् का पूजनीय होता है।
- विषय-व्याधि (बीमारी) है। जैसे शारीरिक व्याधि ग्रस्त जीव शरीर संबंधी कार्य करने में समर्थ नहीं होता, उसी प्रकार विषय (व्याधि) ग्रस्त जीव श्रीकृष्ण की सेवा नहीं कर सकता।
- जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री अपने पति का ही झूठन सेवन करती है इसी प्रकार साधक को भी अपने इष्टदेव का ही झूठन सेवन करना चाहिये। इससे इष्ट निष्ठा बढ़ती है।
- जैसे सेना में भर्ती होने के उपरांत सेना के नियमों का पालन करना पड़ता है और वैसी पोशाक पहननी पड़ती है । उसी प्रकार वैष्णव राज्य में प्रवेश करने से वैष्णव पोशाक और वैष्णव नियम अपनाने पड़ेंगे। जो जीव बैकुण्ठ राज्य में प्रवेश करना चाहता है, वह वैष्णव पोशाक पहने और वैष्णव नियमों का पालन करे। जिस प्रकार कोई सेना में भर्ती होने के उपरांत सेना के नियमों का पालन न करे तो शासित होना पड़ता है इसी प्रकार अगर कोई वैष्णव राज्य में प्रवेश होने के उपरांत वैष्णव नियमों का पालन न करे तो उसे माया द्वारा शासित होना पड़ेगा।
- भक्त चरणधूली, भक्तचरणजल, भक्त झूठन - ये तीनों ही माया व्याधिग्रस्त जीवों के लिये अमोघ दवाई है। इसी के द्वारा ही मायाबद्ध जीव माया के चुंगल से छुटकारा पा सकता है।

सबसे बड़ी बीमारी जो मायाबद्ध जीव को अनादि काल से लगी हुई है, वह है-जन्म-मृत्यु। इसी के अंदर ही सब शारीरिक बीमारियां हैं।

- ❖ विषय सुख खुजली की तरह होता है। जैसे खुजली करने से आनंद मिलता है और खुजलाने की इच्छा होती है और बाद में वह आनंद दुःख में बदल जाता है। इसी प्रकार विषय सुख एक ऐसा सुख है जो सुख सा भासता है परंतु वास्तव में वही दुःख का कारण बनता है।
- ❖ जीव भगवान् की शक्ति का अंश है। शक्ति सर्वदा शक्तिमान की सेवा करती है। इसलिये जीव भगवान् श्रीकृष्ण का सेवक है।
- ❖ अनुकूल भाव से भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा ही भक्ति है। जो मनुष्य श्री भगवान् के स्वरुप को नहीं मानते वह नास्तिक और भगवान् के चरणों में अपराधी हैं। ऐसे जीव यमराज के द्वारा दंडित किये जाते हैं।
- ❖ श्री हरिनाम रुपी दवाई किसी तरह से भी सेवन करने से भव रोग को दूर कर देती है।
- ❖ बद्ध जीव की श्रीहरिनाम, एकादशी व्रत, धाम दर्शन, परिक्रमा में तथा श्रीहरि कथा श्रवण में रुचि नहीं होती। इसका कारण है कि बद्धजीव का चित्त गंदे संस्कारों से भरा पड़ा है और उसको नाम के विषय में बोध नहीं है।
- ❖ वस्तु का बोध होने से ही वस्तु में रुचि होती है। वस्तु के बारे में बोध प्राप्त करने के लिये, जिसका वस्तु के विषय में बोध है, उसका संग करना चाहिये। उसी प्रकार श्रीहरिनाम का बोध प्राप्त करने के लिये जिसका श्रीहरिनाम के विषय में तत्त्व बोध है, उसका संग करना चाहिये।

❖ जीव अपने कर्मों अनुसार ही पैदा होता है और मर जाता है। हम किसी को बलपूर्वक यहाँ नहीं रख सकते। श्रीहरि के किसी भी विधान में हमें समालोचना नहीं करनी चाहिये। श्रीहरि का हर एक विधान मंगलमय है।

❖ किसी की भी निंदा न करके अपना सुधार करना चाहिये। दूसरों की निंदा करने से वह सुधरेगा नहीं। उल्टा आपका नुकसान होगा।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

– 60 –

श्री भगवान् की कृपा

प्राय: सभी बद्धजीवों की धारणा है कि जब भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा होगी तभी श्रीकृष्ण के भजन, सेवा, कीर्तन में मन लगेगा। परंतु यह न तो कोई जानता है और न ही जानने का इच्छुक है कि श्रीकृष्ण की कृपा कैसे प्राप्त होगी। श्रीकृष्ण कृपा तो हर समय, हर स्थान पर वर्तमान है। परंतु उस कृपा का अनुभव हर एक बद्धजीव की अपनी अपनी योग्यता पर निर्भर करता है। यह कहना बिल्कुल गलत है कि भगवान् की कृपा जब होगी तभी भजन करेंगे।

मनुष्य शरीर में भी देखा जाता है कि यदि किसी की कृपा प्राप्त करनी है तो उसका यश गान करो। उसी प्रकार यदि श्रीकृष्ण कृपा प्राप्त करने के इच्छुक हो तो भगवान् श्रीकृष्ण के गुण–यश बखान करो, कीर्तन करो, भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा अवश्य प्राप्त हो जायेगी। भगवान् श्रीकृष्ण सब जीवों के हृदय में निवास करते हैं

और वे सब कुछ जानते हैं कि उनका कीर्तन कौन किस भाव से करता है। जो जीव निष्कपट भाव से कीर्तन करेगा उस पर भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा अवश्य होगी और वह उनकी सेवा प्राप्त करके, उनके नित्य धाम गोलोक वृन्दावन में, उनके साथ रहकर, चरण सेवा लाभ करेगा। इसलिये हर समय भगवान् श्रीकृष्ण का यश कीर्तन करें। भगवान् श्रीकृष्ण के हरेक नाम में उनकी लीलाएँ विद्यमान हैं। इसलिये भगवान् के नामों का कीर्तन करें ।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

– 61–

भजन की पद्धति

जीव स्वरूप से भगवान् श्रीकृष्ण का दास है। अनादिकाल से श्रीकृष्ण से बेमुख होने के कारण, माया में बद्ध होकर, माया का दास बन बैठा है और सांसारिक अभिमान वश किसी को अपना पुत्र, किसी को पिता और किसी को पति इत्यादि मान लेता है। वास्तव में वह उनकी दासता करता है। श्रीहरि की असली दासता छोड़कर मायिक रिश्तों की नकली दासता करता है। यथार्थ बात न समझ कर, वह अपने आप को माया का प्रभु मानता है जो कि जीव की सबसे बड़ी भूल है। इसीलिये वह कष्ट भोग कर रहा है।

श्रीहरि के साथ इस भूले हुये संबंध को गुरुदेव, साधु एवं वैष्णव द्वारा स्थापित होने से श्रीहरि के नाम, रूप, गुण, लीला धाम इत्यादि का ज्ञान हो पाता है। तभी उस जीव का भजन ठीक तरह से

हो जाता है। हम ज्यों-ज्यों श्रीहरि के साथ संबंध युक्त होकर अनुकूल भाव से भजन करते जायेंगे त्यों-त्यों श्रीहरि के साथ संबंध दृढ़ होता जायेगा। जितना संबंध दृढ़ होगा उतनी प्रीति स्वाभाविक ही हो जायेगी । जब प्रीति दृढ़ हो जायेगी तो स्वार्थ बुद्धि नष्ट हो जायेगी।

जो बिना किसी संबंध के श्रीभगवान् का भजन करते हैं, उनमें पूर्ण रूप से स्वार्थ रहता है। वे सांसारिक इच्छाओं को लेकर ही भजन करते हैं। उनका भगवान् के साथ न तो कोई संबंध है और न ही प्रीति। मायाबद्ध जीव में तीन प्रकार की इच्छायें रहती हैं- काँचन, कामिनी और प्रतिष्ठा। इन इच्छाओं की पूर्ति के लिये ही वह भजन करता है। प्राय: लोग ऐसा ही भजन करते हैं। न तो उन्हें कोई बताता है, न ही वे जानने के इच्छुक है। श्रीहरि की माया से मोहित जीव का इस तरफ ध्यान ही नहीं जाता। इसलिये वे कभी मनुष्य, कभी देव तो कभी नरक को प्राप्त होता है अर्थात् संसार चक्कर में विभिन्न योनियों में भ्रमण करता है। जब कभी ऐसे जीव का माया से छूटने का समय आता है तो वह गुरुदेव, साधु-वैष्णव के दर्शन एवं संग लाभ करता है और श्रीहरि से अपने भूले हुये संबंध को जानकर सत्संग में रहकर श्रीहरि के नाम, रूप, गुण, लीला इत्यादि का सेवन करते हुये, श्रीहरि की चरण सेवा प्राप्त करके, माया के फँदे से छुटकारा लाभ कर, श्रीहरि के नित्य धाम में साक्षात् सेवा प्राप्त कर लेता है। इसलिये जो जीव वास्तविक भजन करने के इच्छुक हैं उन्हें साधु-गुरुदेव-वैष्णवों द्वारा अपने संबंध को जान कर भजन में रत होना चाहिये, नहीं तो उनके सभी प्रयास विफल हो जायेंगे। जिस प्रकार धान के छिलकों को कूटने से चावल प्राप्त नहीं हो सकते उसी प्रकार संबंध-रहित भजन करने से

भगवत प्रेम न होकर संसार के विषय ही प्राप्त होंगे, जोकि अनित्य हैं और दुख के कारण हैं। इससे यथार्थ कल्याण नहीं होगा। इसलिये सर्वदा संबंध-युक्त होकर सत्संग में रहकर श्रीहरि के नामों का कीर्तन करना चाहिये।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

-62-

श्री हरिनाम कैसे करना चाहिये

01.08.1980

शुद्ध भक्तों की संगत में रहकर, उनके कहे अनुसार, हरिनाम करने से शुद्ध भक्ति में रुचि होती है । इसके पश्चात् साधक की रसना पर जो नाम आता है, वह शुद्ध नाम होता है । साथ ही साथ, नाम अपराधी व्यक्तियों का संग यत्नपूर्वक त्याग करना जरूरी है । सत्संग ही जीव के कल्याण का एकमात्र साधन है । हमारे प्राणेश्वर श्री गौरांगदेव जी ने श्री सनातन गोस्वामी को यह उपदेश दिया था कि सत्संग ही भक्ति का मूल है । स्त्री-संग और अभक्त-संग इन दोनों को बिल्कुल त्याग कर सत्संग में श्रीकृष्ण नाम करना चाहिये।

श्रीहरिनाम का जिस किसी तरह से भी जप करने से उसका फल मिलता है । जैसे आग में जलाने की शक्ति है और उसे किसी भी तरह छूने से, वह जैसे जलाये बिना नहीं छोड़ती, उसी प्रकार नाम की शक्ति भी काम करती है । नाम अपराधी जिस फल की इच्छा से नाम जपते हैं, नाम उसे वही फल तो दे देते हैं परंतु उसे कृष्ण-प्रेम

रूपी फल नहीं देते। साथ ही साथ उस नाम अपराधी को नाम अपराध का फल भी भोगना पड़ता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि नाम अपराधी जो नाम लेता हैं वह सरलता से उच्चारण कर लेता है। फलस्वरूप सरलता से लिया हुआ नाम सुकृति के रूप में इकट्ठा होता रहता है। धीरे-धीरे सुकृति इकट्ठी होने पर उसे शुद्ध नाम ग्रहणकारी संतों का संग प्राप्त होता है। सत्संग के प्रभाव से नाम अपराधी, हरि भक्त बन जाता है।

उदाहरण के तौर पर किसी पक्षी ने गुलर खा ली पर वह गुलर के बीज को चबा न सका । अभी वह पक्षी कहीं दीवार पर बैठ कर विष्ठा कर आया। वह बीज भी विष्ठा द्वारा दीवार पर लगा रह गया। धीरे-धीरे उस बीज पर मिट्टी आकर जमा हो गई। समय आने पर मिट्टी के साथ मिले बीज ने वर्षा का जल प्राप्त कर अकुंर का रूप धारण कर लिया। उसी प्रकार नाम रूपी बीज भी सत्संग रूपी जल में शुद्ध नाम द्वारा सींचे जाने पर भक्ति रूपी अंकुर के रूप में प्रकट हो जाता है। इसलिये नाम अपराध को छोड़ कर लिये हुये नाम का फल, कभी भी व्यर्थ नहीं जाता है। जन्म-जन्मांतरों में भी, उसका फल सत्संग का सुयोग प्राप्त करके सुनिश्चित ही मिलेगा। इसलिये सत्संग का सुयोग प्राप्त होने पर अवश्य नाम ग्रहण करना चाहिये।

* * *

> दूसरों में दोष दृष्टि करके किसी की निन्दा मत करो। सर्वदा अपने दोष देखो। जड़-जंगमात्मक समस्त जगत् परमात्मा का वैभव है।
>
> (सन्त वाणी)

– 63 –

निरन्तर श्री हरिनाम करने की क्यों आवश्यकता है ?

नाम अपराधियों का चित्त और व्यवहार हमेशा गंदा होता है। वे बहिर्मुख होते हैं। साधु-व्यक्ति, साधु-वस्तु इत्यादि के प्रति उनकी रुचि नहीं होती। कुपात्र, गंदे सिद्धांत, गंदे कर्मों में उनकी रुचि होती है। यदि नाम अपराधी निरंतर नाम करेंगे तभी वह ऊपर दिये गये असत्संग से बच सकते हैं क्योंकि इसके लिये उनको समय ही नहीं मिलेगा। कुसंग न होने से धीरे-धीरे नाम शुद्ध होने से उसकी सद्विषय में रुचि हो जायेगी। इसलिये हमेशा सत्संग में रहकर, निरंतर हरिनाम करने से, मायाबद्ध जीव के अनर्थों की निवृति हो जायेगी। फिर क्रमशः नाम में निष्ठा, फिर रुचि, आसक्ति, भाव और प्रेम की प्राप्ति होगी। तब फिर युगल सरकार श्रीराधा गोविंद जी की चरण सेवा का सुयोग प्राप्त होगा जो कि शुद्ध नाम का चरम फल है। इसलिये सर्वदा यही नाम किया करें।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

***

– 64 –

मायाबद्ध जीव की हृदय रूपी गुफा का नक्शा

20.10.1980

मायाबद्ध जीव की हृदय रूपी गुफा में जन्म-जन्मांतरों के अच्छे-बुरे कर्मों का बहुत कूड़ा-कर्कट भरा पड़ा है। भ्रम, राग, द्वेष, चोरी, कपटता, धोखाबाज़ी, अनेकों कामनाएं, मान की लालसा, ईर्ष्या, क्रोध की अग्नि, लोभ, अहंकार, जाति, कुल, रूप, धन पदवी इत्यादि के अभिमान से जीव का चित्त भरा पड़ा है जिसकी गर्मी से जीव की चित्त रूपी गुफा में आग सुलगने से जीव पीड़ित है और चित्त अति चंचल है। चंचल वस्तु पर कोई चीज ठहर नहीं सकती। हाथ यदि चंचलता धारण करे तो कोई भी वस्तु उस पर टिक नहीं सकती। इसी प्रकार चंचल चित्त, श्रीभगवान् के नाम, गुण, लीला रूप का ध्यान नहीं कर सकता। जब तक ऊपर वर्णित कूड़ा-कर्कट चित्त से बाहर नहीं निकलता, चंचल-चित्त से ध्यान या समाधि नहीं लग सकती।

अच्छे-बुरे कर्मों से ही चित्त गंदा हुआ है। इसलिये कर्म द्वारा चित्त से गंद साफ नहीं किया जा सकता। जैसे मैल द्वारा मैले कपड़े को साफ नहीं किया जा सकता। ज्ञान द्वारा भी गंदे चित्त को साफ नहीं किया जा सकता है क्योंकि ज्ञानी अपने को ईश्वर मानता है। इस अपराध से वह अपने चित्त को और गंदा कर लेता है। ज्ञानी अपने असली स्वरूप-भगवान् की दासता को भूल गया है। मतलब यह कि ज्ञान रूपी अग्नि इस जीव के असली स्वरूप को जला देती है और अपने को ब्रह्म मानने से, उस जीव को घोर अपराधी बना

देती है। केवल निरंतर हरिनाम संकीर्तन ही गंदे चित्त को साफ कर सकता है। निरंतर हरिनाम कीर्तन करने से और कूड़ा-कर्कट चित्त में नहीं आयेगा और पहले वाला कूड़ा-कर्कट साफ हो जायेगा। जब चित्त साफ हो जायेगा तो चित्त रूपी गुफा में उसके स्वामी बैठ जायेंगे तभी भगवान् के नाम, रूप, गुण, लीला इत्यादि का चित्त में प्रकाश होगा। तभी नाम का मुख्य फल - प्रेम उसे प्राप्त होगा। तभी जीव का मंगल होगा। हमारे प्राणेश्वर गौरांग देव ने कहा है कि जब इस तरह निर्मल चित्त से कोई कृष्ण नाम करेगा तो वह वैष्णव होगा। इसके बाद में जो निरंतर हरिनाम होगा, वह वैष्णवतर होगा। निरंतर हरिनाम करते-करते, हरिनाम से तारतम्य प्राप्त करके, उसका चित्त चिन्मय हो जायेगा ऐसे भाग्यवान् जीव का जो कोई भी दर्शन करेगा, वह भी हरिनाम करने लग जायेगा। उस भाग्यवान जीव को वैष्णवतम् कहा जायेगा। वही उत्तम भक्त है। वही जगद्गुरु है। उसके चित्त रूपी गुफा में उसके प्रभु हर समय ममतापूर्वक बैठे रहते हैं। ऐसे भाग्यवान् जीव हर समय, शब्द द्वारा, दूसरें जीवों को अपने प्रभु का नाम बांटते रहते हैं। ऐसे जीव संसार में दुर्लभ हैं। ऐसे परमभावगत् संसार के कल्याण के लिये इस भूतल पर भगवान् की इच्छा से आते हैं।

***

श्रीहरिनाम-संकीर्त्तन सदा, सर्वदा, नित्य भगवत्-प्राप्ति का परम उपाय है। श्रीनाम-संकीर्त्तन चारों युगों में सर्वोपरि साधन और साध्य है। कलियुग में तो एक मात्र श्रीनाम-संकीर्त्तन सर्वश्रेष्ठ एवं साधन-साध्य है। श्रीकृष्ण स्वयं कलि में श्रीनाम संकीर्त्तन करते हैं, अत: कलि में इसकी समधिक विशेषता है।

(सन्त वाणी)

– 65 –

भगवान् श्री हरि को प्राप्त करने का उपाय – केवल प्रीति

20.10.1980

❖ क्या कर्मी भगवान् को प्राप्त कर सकता है ? – नहीं ।
❖ क्या ज्ञानी भगवान् को प्राप्त कर सकता है ? – नहीं ।
❖ क्या योगी भगवान् को प्राप्त कर सकता है ? – नहीं ।

भगवान् का अर्थ है सभी शक्तियों का मालिक। जैसे धनवान् का अर्थ है जो धन का मालिक है।

कर्मी जो कर्म करता है वह उसके बदले में सुख चाहता है। इस लोक के सुख और मरने के पश्चात् परलोक के सुख। वह भगवान् को नहीं चाहता। इसलिये उसे भगवान् कहां से मिलेंगे?

ज्ञानी जो साधन करता है वह इस संसार रूपी सागर से पार पाने के लिये करता है । दुःखों से मुक्ति लाभ करना चाहता है। इसलिये वह भी श्री भगवान् को नहीं चाहता फिर उसे भी भगवान् कैसे मिलेंगे?

योगी भगवान् के अंश (Partial manifestation) परमात्मा को, जो कि हरेक जीव के हृदय रूपी गुफा में जीव के साथ बैठे हुये हैं, पाने के लिये Mechanical ढंग से चित्त को परमात्मा में नियोग करने की कोशिश करता है। वह इन्द्रियों के वेग को रोकने की कोशिश में लगा रहता है जबकि ज्ञान इन्द्री ऐसा सुयोग पाते ही बलवती हो उठती है। इसलिये योगी भी भगवान् को प्राप्त नहीं कर सकता है।

केवल प्रीति धर्म भक्ति द्वारा ही भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है। भक्ति युक्त जीव भगवान् को चाहता है इसलिये वह भगवान् को प्राप्त कर लेता है। भक्ति का मतलब है कि हर तरह की सांसारिक उपाधियों से रहित होकर भगवान् को सुखी करने की एकमात्र लालसा। ऐसी भक्ति द्वारा ही भगवान् की कृपा लाभ की जा सकती है। श्रीचैतन्य चरितामृत में वर्णित है

आत्म इन्द्रिय प्रीति वांच्छा तारे बले काम।
कृष्ण इन्द्रिय प्रीति वांच्छा धरे प्रेम नाम।।

जो कुछ भी अपनी इन्द्रियों को खुश करने के लिये किया जाता है उसे काम कहते हैं और जो भगवान् की इन्द्रियों को खुश करने के लिये किया जाता है उसे प्रेम भक्ति कहते हैं । इसी तरह की भक्ति द्वारा ही भगवान् की कृपा प्राप्त की जा सकती है । भगवान् की कृपा द्वारा ही भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है।

भगवान् से न तो कोई बड़ा है न ही बराबर है इसलिये कोई भी उनकी इच्छा बगैर उन्हें प्राप्त नहीं कर सकता । जिसको कृपा करके वह अपना तत्त्व दर्शाते हैं, वही उनको जान सकता है । भगवान् सर्वशक्तिमान हैं इसलिये कोई भी उन्हें प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि इससे उनकी शक्ति सीमित हो जाती है । यदि भगवान् कृपा करके अपने को दर्शाते नहीं तो भी उनकी शक्ति सीमित हो जाती है। इसलिये भगवान् की कृपा द्वारा ही उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। जो शरणागत जीव हैं और भगवान् को ही अपना सर्वेसर्वा मानते हैं, भगवान् ही जिनका जीवन है, जो खाते, पीते, सोते, जागते भगवान् का ही यशगान करते हैं, उन पर भगवान् की कृपा सुनिश्चित है । वे भगवान् को अवश्य प्राप्त करते हैं। इसमें यदि किसी को संशय है तो उसका कहीं भी निस्तार नहीं है। वह बार-बार जन्म-मरण के चक्कर में घूमता रहेगा।

निताई गौर हरि बोल

***

– 66 –

चिन्मय तत्व का सहारा ही भवसागर में त्रिगुणमयी माया से छुटकारा दिलाने का साधन है

21.10.1980

श्री भगवान् के नाम, धाम, गुण, लीला, परिकर, भक्त, प्रसाद सभी चिन्मय हैं । चिन्मय वस्तु के निकट माया नहीं आ सकती। भगवान् के प्रिय भक्त गुरुदेव, जो भगवान् के प्रकाश विग्रह हैं, वह भी चिन्मय हैं। माया उनके भी नजदीक आने का साहस नहीं करती। परंतु मायाबद्ध जीव पर हर समय माया का प्रहार होता रहता है। यह प्रहार तब तक होते रहेंगे जब तक मायाबद्ध जीव चिन्मय तत्त्व का सहारा नहीं लेता। जब किसी भाग्यवान् जीव का माया से छुटकारा पाने का समय आता है तब उसे भगवान् के प्रिय भक्त, भगवान् के अभिन्न स्वरूप, भगवान् की प्रकाश मूर्ति, श्रीगुरुदेव के दर्शन लाभ होते हैं। तब वह भाग्यवान् जीव गुरुदेव का चरण आश्रय ग्रहण करता है। गुरुदेव उस जीव के गले में तुलसी की माला डाल कर उसे भगवान् को अर्पण कर देते हैं। गुरुदेव की कृपा जो कि चिन्मय है, से रक्षित होकर भाग्यवान् जीव माया से धीरे-धीरे छुटकारा पा लेता है। ज्यों-ज्यों वह जीव भजन में आगे बढ़ता है उसी अनुपात में माया उसका पीछा छोड़ती जाती है। चिन्मय तत्त्व की कृपा के बिना कोई भी जीव माया से छुटकारा नहीं प्राप्त कर सकता। भगवान् की कृपा भक्त के पीछे पीछे चलती है। इसलिये भक्त की कृपा ही एकमात्र श्रीभगवान् की माया से पीछा छुड़वा सकती है। तभी वह जीव इस दुःख रूपी भवसागर से पार हो कर

भगवान् के नित्य धाम गोलोक वृन्दावन में भगवान् की साक्षात् सेवा लाभ कर हमेशा के लिये सुखी हो सकता है।

निताई गौर ! हरि बोल !

***

– 67–

तुलसी माला की महिमा

जो वस्तु भगवान् को अर्पण की जाती है वह तुलसी देकर अर्पण करने का विधान है । बिना तुलसी के प्रभु कोई भी वस्तु ग्रहण नहीं करते। इसमें किसी तरह का तर्क और संशय की बात नहीं है । फिर भगवान् अपने प्रिय भक्त की दी हुई वस्तु को ही केवल ग्रहण करते हैं। इसलिये भगवान् के प्रिय भक्त श्रीगुरुदेव, जब किसी मायाबद्ध जीव को भगवान् की शरण में देते हैं तो उसके गले में तुलसी की माला डाल कर भगवान् के अर्पण कर देते हैं और भगवान् उसे स्वीकार कर चिन्मय बना देते हैं जिससे भगवान् की माया जो कि उसका पीछा कर रही थी, उसका पीछा करना छोड़ देती है। माला धारण किये हुये उस जीव के नजदीक कोई भूत-प्रेत, यहां तक कि यमदूत तक नहीं आते क्योंकि वे उसे श्री हरि का जन समझते हैं। आप देखेंगे कि यदि किसी कुत्ते के गले में पट्टा बँधा हो तो उसे किसी का पालतू कुत्ता समझ कर कोई नहीं मारता जबकि दूसरे कुत्तों को सभी मारने को दौड़ते हैं। इसी प्रकार जो दूसरे बद्धजीव हैं वह हमेशा माया की चोट खाते रहते हैं और दु:खी होते रहते हैं । यमदूत हमेशा उनका पीछा करते रहते हैं। कर्म बंधन खत्म होते ही मृत्यु को प्राप्त जीव को यमदूत उसी समय पकड़ लेते हैं। परंतु भगवान् एवं भक्त के चरणाश्रित जीव के निकट, यमदूत न आकर भगवान के प्रिय पार्षद, विष्णुदूत ही आते हैं। जो उस

जीव को हर तरह से सुखी कर भगवान् के धाम में ले जाते हैं । इसलिये गुरुदेव जी से तुलसी माला प्राप्त कर हरि भजन में लग जाना चाहिये।

निताई गौर ! हरि बोल !

***

– 68 –

सत्संग किसे कहते हैं ?

सत् का अर्थ है नित्य वस्तु (हमेशा रहने वाली वस्तु को नित्य वस्तु कहते हैं) का संग। नित्य वस्तु है श्री भगवान् ! श्री भगवान् के नाम, धाम, गुण, रूप, लीला, भगवान् के शरणागत भक्त, इनका संग करने को ही सत्संग कहते हैं । शरीर अनित्य है, शरीर संबंधी जो चीजें हैं, वह सभी अनित्य हैं । कभी भी उनका नाश हो सकता है। इन अनित्य चीजों के साथ जो संग होता है, वह सभी असत्संग है।

***

– 69 –

संग कैसे होता है

संग छः तरह से होता है।

(i) किसी से वस्तु लेना।

(ii) किसी को प्रिय वस्तु देना।

(iii) किसी को खाना खिलाना।

(iv) किसी से कुछ लेकर खाना।

(v) किसी को हृदय की गुप्त बात कहना।

(vi) किसी के हृदय की गुप्त बात सुनना।

किसी के साथ संबंध जोड़ने के लिये उपरोक्त छः तरह के संग करने पड़ते हैं। जिस किसी के साथ ये छः संग हुए उससे आसक्ति हो जायेगी। यदि ये संग संसारी लोगों के साथ होंगे तो संसार से प्यार हो जाएगा। यदि यही संग भक्त के साथ होंगे तो भक्त से प्यार हो जायेगा। भक्त के साथ प्यार होने से ही सत्संग अपने आप हो जायेगा और श्री भगवान् की नज़र आप पर भी आ जायेगी क्योंकि भक्त पर भगवान् की नज़र रहती है। यही जीव का प्रयोजन है। श्री भगवान् के नाम, गुण, रूप, लीला, धाम का संग ही सत्संग है।

* * *

– 70 –

श्री भगवान् के बारे में बोध कैसे हो सकता है?

जिसको वस्तु के विषय में बोध होता है, उसका संग करने से वस्तु के बारे में बोध हो सकता है । जब वस्तु का बोध हो जाये तभी रुचि पैदा होती है । इसी प्रकार जिसे श्री भगवान् के विषय में बोध हो उसका संग करने से भगवान् का बोध होगा। तभी भगवान् के नाम, रूप, लीला, गुण, धाम आदि में रुचि होगी।

जिस वस्तु को जानने में आग्रह (इच्छा) न हो तब नींद आती है। सत्संग में जिसे नींद आती है, समझ लो कि उसकी सत् वस्तु भगवान् को जानने की इच्छा (आग्रह) नहीं है।

* * *

भक्तों का संग ही भक्ति–उत्कण्ठा बढ़ाने का प्रधान उपाय है। भक्तों की चरणधूलि से मलिन–चित्त मार्जित होता है।

(सन्त वाणी)

- 71 -

शरणागत की रक्षा श्री भगवान् करते हैं

जो कोई किसी के पास शरणागत है, उसी की वह रक्षा करता है न कि सभी की । जिस प्रकार खरीदी हुई गाय के चारे की चिंता, गाय की न होकर जिसने खरीदी है उसकी होती है, उसी प्रकार जो श्री भगवान् के शरणागत हैं, उसी का ही फिकर भगवान् को होगा। जो कोई अपनी स्वतंत्रता को रखता है और इसके द्वारा सभी कार्य करता है, उसकी चिंता भगवान् क्यों करेंगे ? जो यह सोचता है कि मैं अपनी आज़ादी को भी रखूंगा और युक्तियों द्वारा श्री भगवान् की सेवा भी प्राप्त करुँगा, वह धोखे में है। अपनी आज़ादी को भगवान् की आज़ादी में मिलाकर, शरणागत होकर, श्री भगवान् की कृपा द्वारा ही श्री भगवान् जी की सेवा प्राप्त हो सकती है, अन्यथा नहीं । ऐसे शरणागत को ही श्री भगवान् सत्संग की सुविधा प्रदान करते हैं और उस जीव की हर तरह से रक्षा करते हैं।

- 72 -

श्रीगुरुदेव की उपदेशावली

21.10.1980

- आग से तपे हुये लाल पिंजरे में वास करना अच्छा है परन्तु श्रीभगवान् से विमुख जीव का संग नहीं करना चाहिये। आग से जलकर तो नाशवान् शरीर नष्ट होगा परन्तु भगवान् से विमुख जीव का संग करने से आत्मा का हनन होगा। जिससे मायाबद्ध जीव भगवान् से और दूर होकर भव बँधन में बुरी तरह से जकड़ जायेगा।
- विषयी पुरुष का खाना चाहे सात्विक ही क्यों न हो, नहीं खाना चाहिये, क्योंकि उस खाने से दाता और भोक्ता (खाने वाले) का चित्त मलिन होता है। गंदे चित्त से भगवान् की याद नहीं आती और वह विमुखता को जन्म देने वाला होता है।
- जो कुछ भी हमें प्राप्त होता है वह हमारे पूर्व कृत कर्मों का फल है। मनुष्य कहीं भी चला जाये, कर्म फल उसके साथ जाते हैं। यदि किसी जीव के कर्म ऐसे हों कि वह धनी होगा तो वह कहीं भी चला जाये वह धनी ही रहेगा।
- विद्याओं में सर्वश्रेष्ठ विद्या पराविद्या - भक्ति है ।
- सब शास्त्रों में श्रेष्ठ शास्त्र - श्रीमद्भागवत्पुराण है, जिसमें स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण की प्रकट लीलाओं का वर्णन है ।
- भगवत् स्वरूपों में श्रेष्ठ - भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं हैं ।
- भगवान् के नामों में श्रेष्ठ नाम - श्रीकृष्ण का नाम है ।

- धामों में श्रेष्ठ धाम - श्री वृन्दावन धाम है। यह धाम भगवान् श्रीकृष्ण की लीला भूमि है। श्री वृन्दावन से अभिन्न श्री नवद्वीप धाम भगवान् श्री गौरांग महाप्रभु की लीला भूमि है।
- सबसे बड़ा दु:ख - भगवान् से विमुखता का है ।
- माता-पिता वही अच्छे हैं जो अपनी संतान को भगवत् सेवा में लगा दें।
- पति वही अच्छा है जो अपनी स्त्री को भगवान् की सेवा में लगा दे ।
- गुरुदेव वही अच्छे हैं जो अपने शिष्यों को विषय रूपी गड्ढे से बाहर निकाल दें।
- भगवान् की अनन्त शक्तियों में उनकी अन्तरंगा अर्थात् हल्।दिनी शक्ति, श्रीमती राधा रानी श्रेष्ठ हैं।
- भजन अंगों में सर्वश्रेष्ठ अंग श्रीनाम संकीर्तन है ।
- तत्त्वज्ञान द्वारा ही पूर्ण ज्ञान भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है। इन चरम चक्षुओं द्वारा भगवान् को नहीं देखा जा सकता।
- जब जीव अपने को कर्ता मानकर, अपनी हिम्मत द्वारा श्रीविग्रह (मूर्ति) के दर्शन करने को जायेगा तो पत्थर दर्शन करेगा जब भगवान् को कर्ता मानकर दर्शन करेगा तो श्री विग्रह में भगवान् के दर्शन करेगा ।
- गर्भ मंदिर में भगवान् के श्रीविग्रह को प्रणाम नहीं करना चाहिये।
- श्री हनुमान जी, श्री राम जी के निष्ठावान भक्त हैं उन्होंने हमें शिक्षा दी है कि भक्त की अपने इष्टदेव में कैसी निष्ठा होनी चाहिये।

- सती स्त्री जैसे अपने पति की जगह किसी और को नहीं बैठाती लेकिन अपने ससुर, देवर, जेठ सब का यथायोग्य सम्मान करती है। इसी तरह अपने इष्ट देव की जगह अन्य देवी-देवताओं को नहीं बैठाना चाहिये, दूसरे-दूसरे देवी-देवताओं का भगवान् श्रीकृष्ण के सेवक मान कर सम्मान करना चाहिये। इससे इष्ट निष्ठा बढ़ेगी।
- नाशवान् शरीर का बोध प्राप्त करके इसे श्री हरि-गुरु- वैष्णव सेवा में नियोजित करने से निश्चित मंगल होगा ।
- अगर कोई कहे कि मैं आग को नहीं मानता, आग को मैं लात मारता हूं तो ऐसा करने से आग की कुछ हानि नहीं होगी बल्कि लात अवश्य झुलस जायेगी। दूसरी ओर अगर वह आग को मानेगा तो उससे कई प्रकार का लाभ ले सकता है । इसी प्रकार जो श्रीहरि को नहीं मानता इससे श्रीहरि का कुछ बिगड़ने वाला नहीं परंतु वह भगवत् कृपा से वंचित अवश्य हो जाएगा। He will be deprived from the grace of the Lord.
- खुशामद कपटता की निशानी है ।
- पक्षपात करने वाला धर्म की रक्षा नहीं कर सकता।
- श्री हरि-गुरु-वैष्णव निन्दा से बढ़ कर कोई बड़ा अपराध नहीं है।
- दूसरों का सुधार करने की बजाय अपना सुधार करो।
- भगवान्, भक्त एवं भगवद् वस्तु को छोड़कर बाकी सब असत्य है। जो जीव सत्य वस्तु की सेवा करता है वही सत्य का पालन करता है ।

- ❖ किसी का कोई अपराध नहीं होने पर भी, अगर कोई उसे अपराधी कहे, तभी उसमें कितनी सहनशीलता है इस बात का पता चलेगा।
- ❖ किसी के भी द्वारा काम करने पर उसकी नुक्ता-चीनी (आलोचना) अवश्य होगी। जो नुक्ताचीनी का सामना नहीं कर सकता वह कोई भी काम नहीं कर सकता।
- ❖ श्रीकृष्ण की सेवा को छोड़कर साधु की और कोई इच्छा नहीं है, इसलिये वह सहनशील है।
- ❖ कोई भी जीव सभी को खुश नहीं कर सकता।
- ❖ सबसे बड़ा उत्सव वह है जो श्रीहरि-गुरु-वैष्णव के लिये किया जाये।
- ❖ जिस किसी भी साधन से हरि में प्रीति बढ़े, वही विधि है। जिससे हरि प्रीति कम हो, वही निषेध है । सभी तरह की विधि-निषेध इसके अंदर है ।
- ❖ Means are justified by the end, लक्ष्य द्वारा ही किसी क्रिया को नापा जा सकता है । श्री हनुमान जी ने लंका को आग लगाकर कितने ही जीवों का नाश किया । स्थूल दृष्टि से यदि देखा जाये तो यह घोर पाप है परंतु फिर भी श्री हनुमान जी सभी द्वारा पूजित है क्योंकि उनके सभी कार्य श्री राम की प्रीति के लिये हैं । उन्होंने जो भी काम किया, श्रीराम प्रीति के लिये किया न कि अपनी इन्द्रियों को प्रसन्न करने के लिये । श्री चैतन्य चरितामृत में वर्णित है :-

आत्म इन्द्रिय प्रीति वांच्छा तारे बले काम।
कृष्ण इन्द्रिय प्रीति वांच्छा धरे प्रेम नाम।।

- सेवावृति जागृत होने पर ही भगवत् सेवा शुरु होती है। चाहे वह तन से हो, मन से हो, अथवा धन से हो। यदि धन से भगवान् की सेवा होती तो बहुत से धनियों ने कब से भगवान् को प्राप्त कर लिया होता । निर्मल चित्त में ही भगवत् सेवावृति जागृत होती है। नाम भगवान् की सेवा और नाम संकीर्तन से चित्त निर्मल होता है। नाम भगवान् और नाम संकीर्तन को छोड़कर जो तन, मन, धन से सेवा होती है, वह देखने में सेवा लगती है, असल में वह अपनी ही सेवा होती है। उस सेवा का लक्ष्य काँचन, कामिनी और प्रतिष्ठा है।

- भगवान् का जो भक्त है उसके साथ दोस्ती करने से भगवान् की दृष्टि उस पर आ जायेगी। भगवान् के भक्त के साथ वैरभाव रखने से चाहे कोई कितना भी भजन क्यों न करे, उस पर भगवान् प्रसन्न होने वाले नहीं हैं।

- जब कोई भगवान् एवं उनके भक्त का संग छोड़ देगा तो उसे भगवान् की माया पीड़ित करेगी ही करेगी ।

- भगवान् का भजन करने पर यदि कोई भगवान् को नहीं चाहेगा तो उसे माया मिलेगी और उसे दुर्गा देवी, माया के संसार में अच्छी-अच्छी वस्तुएँ देगी जोकि जीव की दुर्दशा करेंगी।

- श्री वृन्दावन भूमि में जो जीव जन्तु हैं वे सभी भाग्यशाली हैं। पूर्व-पूर्व जन्म-जन्मांतरों की सुकृति से वे वृन्दावन में वास करते हैं और पूर्वकृत अच्छे-बुरे कर्मानुसार भिन्न-भिन्न योनियों में पैदा हुये हैं । सूअर का जन्म कर्म से है और वृन्दावन वास पूर्व सुकृति से है । वृन्दावन में रह कर वह धाम की महिमा से सुकृति लाभ कर रहा है ।

❖ सभी जीव जल, अग्नि, वायु, इन्द्रादि देवताओं एवं भूत प्राणियों के कर्ज़दार हैं और इन सबके स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण हैं। अगर उनकी सेवा की जाये तो इन सबका अलग से ऋण चुकाना नहीं पड़ेगा। जिस प्रकार पेड़ की जड़ में जल सींचने से वृक्ष के प्रत्येक हिस्से को अलग से सींचने की आवश्यकता नहीं होती और पेट में भोजन देने से शरीर के सब अंगों को भोजन मिल जाता है। इसलिये जो सभी ऋणों से मुक्त होना चाहता है उसे श्रीकृष्ण का भजन करना चाहिये।

❖ हम सभी जीव विषय रूपी जो धन इकट्ठा कर रहे हैं उसकी कोई गारंटी नहीं कि वह हम भोग सकेंगे या नहीं परंतु श्री हरिनाम रूपी धन जो इकट्ठा करेगा वह हमेशा-हमेशा के लिये साथ रहेगा। यहां की बात तो छोड़ो, मरने पर भी उसके साथ रहेगा। इसलिये यदि सदैव सुखी रहना चाहते हो तो श्री हरिनाम रूपी धन इकट्ठा करने के लिये हमें तन-मन से लग जाना चाहिये।

* * *

नियम-पूर्वक श्रीनाम-संकीर्त्तन का आश्रय ग्रहण करना चाहिए। जहाँ श्रीनाम-संकीर्त्तन होता है, वहाँ श्रीभगवान् अवश्य उपस्थित रहते हैं। श्रीनाम-संकीर्त्तन में प्रेम-विकार उत्पन्न होने पर श्रीभगवान् प्रेमी के वशीभूत हो जाते हैं। श्रीनाम-संकीर्त्तन में प्रेम-विकार तभी उदित होते हैं, जब नामापराध नहीं रहते। नामापराध खण्डन का एक मात्र उपाय भी श्रीनाम-संकीर्त्तन है।

(सन्त वाणी)

– 73 –

मेरे श्रीगुरुदेव श्री श्रीमद् भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज जी की अन्तिम वाणी के कुछ अंश

श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ, कोलकाता
30 दिसंबर, 1978

"मैं अस्वस्थ हूँ। हो सकता है कि अब मैं ज्यादा दिन इस जगत् में न रह सकूँ। मेरे चले जाने के बाद एक व्यक्ति मेरे स्थान पर बैठेगा। वह कौन बैठेगा? ऊपर से जो निर्देश (order) आ रहा है, उसे मानना, यही विधान है। मेरे चले जाने के पश्चात् श्रीमान् भक्तिबल्लभ तीर्थ महाराज Next President अग्रिम आचार्य होंगे।

भक्त का आनुगत्य ही वैष्णवता है । भक्त कौन है ? भक्त के आनुगत्य में जो भगवान् की प्रीति के लिये रहता है वही श्रेष्ठ भक्त है। इसलिये ऐसे भक्त का आनुगत्य करना ही भक्ति प्राप्ति का रास्ता है। भक्त की कृपा जिन पर होती है, भगवान् की कृपा भी उन पर ही होती है । हरिभजन करने के लिये तीन रुकावटें हैं –

1. विषय–स्पृहा – कनक अर्थात रुपया पैसा ।

2. हरिभक्ति में एक और रुकावट है – स्त्रीसंग । स्त्री के साथ स्थूल–संग, सूक्ष्म संग – दोनों प्रकार का स्त्री संग ही हरि भक्ति में बाधक है ।

3. और एक रुकावट है – प्रतिष्ठा के लिये चेष्टा ।

तुम इन तीनों बाधाओं को त्याग देना। तुम लोग सब निष्ठा के साथ हरिभजन करना। जैसी भी अवस्था में रहो, हरिभजन कभी नहीं छोड़ना। यही मेरी तुम लोगों के पास प्रार्थना, अनुरोध, वाँछा और उपदेश है। हर एक अवस्था में तथा सभी जगहों पर तुम लोग हरिभजन करना। श्रेष्ठ वैष्णव को हर समय सम्मान देना। इसमें किसी प्रकार का संकोच न करना। इससे मंगल होगा।

* * *

– 74 –

भगवान् श्रीकृष्ण जी की प्रतिज्ञा

मेरे मार्ग पर पैर रखकर तो देख,
तेरे सब मार्ग न खोल दूँ तो कहना।
मेरे लिये कड़वे वचन सहकर तो देख,
कृपा न बरसे तो कहना।
मेरी तरफ आकर तो देख,
तेरा ध्यान न रखूँ तो कहना।
मेरी बातें लोगों से करके तो देख,
तुझे मूल्यवान न बना दूँ तो कहना।
मेरे चरित्र का मनन करके तो देख,
ज्ञान के मोती तुझमें न भर दूँ तो कहना।
मुझे अपना मददगार बनाकर तो देख,
तुझे सबकी गुलामी से न छुड़ा दूँ तो कहना।
मेरे लिये आँसू बहाकर तो देख,
तेरे जीवन में आनन्द के सागर न भर दूँ तो कहना।
मेरे मार्ग पर निकल कर तो देख,
तुझे शान्ति दूत न बना दूँ तो कहना।
मेरा कीर्तन करके तो देख,
जगत का विस्मरण न करा दूँ तो कहना।
तू मेरा बनकर तो देख,
हर एक को तेरा न बना दूँ तो कहना।

हरे कृष्ण
हरे कृष्ण
कृष्ण कृष्ण
हरे हरे
*
हरे राम
हरे राम
राम राम
हरे हरे

– 75 –

दो मिनट में भगवान् का दर्शन

श्रीमद्‌भागवत पुराण में कथा आती है कि खट्वाँग को दो घड़ी में भगवान् के दर्शन हो गये थे, परन्तु मेरे श्रील गुरुदेव परमाराध्यतम नित्यलीलाप्रविष्ट विष्णुपाद 108 श्रीश्रीमद् भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज ने कहा है कि यदि कोई भी व्यक्ति हर रोज़ नीचे लिखी तीनों प्रार्थनाओं को करे, जिसमें दो मिनट का समय लगता है, तो उसे निश्चित रूप से इसी जन्म में भगवद्–प्राप्ति हो जायेगी। यह तीनों प्रार्थनाएँ सभी ग्रंथों, वेदों तथा पुराणों का सार हैं।

पहली प्रार्थना

रात को सोते समय भगवान् से प्रार्थना करो –

''हे मेरे प्राणनाथ गोविंद ! जब मेरी मौत आवे और मेरे अंतिम सांस के साथ, जब आप मेरे तन से बाहर निकलो तब आपका नाम उच्चारण करवा देना। भूल मत करना।''

दूसरी प्रार्थना

प्रात:काल उठते ही भगवान् से प्रार्थना करो –

''हे मेरे प्राणनाथ ! इस समय से लेकर रात को सोने तक, मैं जो कुछ भी कर्म करूँ, वह सब आपका समझ कर ही करूँ और जब मैं भूल जाऊँ, तो मुझे याद करवा देना।''

तीसरी प्रार्थना

प्रात:काल स्नान इत्यादि करने तथा तिलक लगाने के बाद भगवान् से प्रार्थना करो –

''हे मेरे प्राणनाथ ! गोविंद ! आप कृपा करके मेरी दृष्टि ऐसी कर दीजिये कि मैं प्रत्येक कण-कण तथा प्राणीमात्र में आपका ही दर्शन करूँ।''

आवश्यक सूचना – इन तीनों प्रार्थनाओं को तीन महीने लगातार करना बहुत जरूरी है। तीन महीने के बाद अपने आप अभ्यास हो जाने पर प्रार्थना करना स्वभाव बन जायेगा। जो इन तीनों प्रार्थनाओं के पत्रों को छपवा कर/इसकी फोटोकापी करवा कर वितरण करेगा उस पर भगवान् की कृपा स्वत: ही बरस जायेगी। कोई भी आज़मा कर देख सकता है।

– 'इसी जन्म में भगवद्-प्राप्ति' से साभार
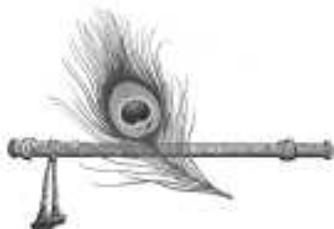
– 76 –

तुलसी माँ की प्रसन्नता से ही भगवद्-प्राप्ति

जब तक वृन्दा महारानी की कृपा नहीं होगी तब तक गुरु, वैष्णव तथा भगवान् भी कुछ नहीं कर सकते क्योंकि भगवान् तो तुलसी माँ के पराधीन हैं। तुलसी महारानी के परामर्श के बिना भगवान् कुछ नहीं कर सकते। इसका प्रसंग लेख, धर्मग्रंथों में लिखा मिलता है जो विस्तृत होने से सूक्ष्म में लिखा जा रहा है।

जहाँ श्रीगुरु प्रदत्त माला का निरादर होता है, वहाँ पर साधक का हरिनाम में मन नहीं लगता। जपने की माला में सुमेरु, जो माला के मध्य में होता है, साक्षात् भगवान् है। सुमेरु के दोनों ओर, जो सूखी तुलसी की मनियाँ हैं, वे गोपियाँ हैं जो सुमेरु भगवान् को घेरकर खड़ी रहती हैं। माला मैया का निरादर होने से माला उलझ जाती है, उंगलियों से छूट जाती है और किसी का बुरा सोचने पर माला टूट जाती है। जब माला का आदर-सत्कार होता है तो हरिनाम में रुचि होती है और मन लगता है। जाप भी भार स्वरूप नहीं होता।

माला को सब जापक जड़ और निर्जीव समझते हैं लेकिन माला जड़ और निर्जीव नहीं है। विचार करने की बात है कि निर्जीव वस्तु क्या माया से छुड़ा सकती है? क्या भगवान् से मिला सकती है? अर्थात् माला हमारी आदि जन्म की, अमर माँ है । वही हमको अपने पति-परमेश्वर भगवान् से मिला देगी।

जब जपने के लिये माला हाथ में लें तो पहले मस्तक पर लगावें। इसके बाद हृदय से लगावें। फिर माला मैया के चरणों का चुंबन करो तो माला मैया का आदर-सत्कार हो जायेगा। इससे पहले, पाँच बार हरिनाम-

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।।

का उच्चारण करें। तब ही माला- झोली में हाथ डालें वरना माला मैय्या सुमेरु भगवान् को उंगलियों में नहीं पकड़ायेगी। सुमेरु को ढूँढना पड़ेगा। माला को जाप के बाद स्वच्छ जगह में रखें वरना अपराध बन जायेगा।

जो धरातल पर पेड़ के रूप में तुलसी माँ खड़ी है, उसकी सुचारु रूप की सेवा का तो मूल्य ही अकथनीय है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण श्री चैतन्य महाप्रभु हैं, जो वृन्दा महारानी की अकथनीय सेवा में संलग्न रहते थे।

यह मेरे श्रीगुरुदेव का अकथनीय लेख है। इन बातों को कोई भी आज़मा कर देख सकता है। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती।

-'इसी जन्म में भगवद्-प्राप्ति' से साभार

***

श्रीनाम उच्चारण करने वाले व्यक्ति की ओर नामी श्रीभगवान् मुड़कर अवश्य देखते हैं। श्रीनाम एवं नामी-श्रीभगवान् दोनों अभिन्न हैं, स्वयं प्रकाश-चिन्मय हैं।

हे प्रभुपाद! हे गुरुदेव! हे करुणा के सागर!
हे अधमजनों के तारणहार! हे पालनहार! हम सब पर
कृपा कीजिये और हमें अपने चरणकमलों का आश्रय दीजिये।
आपकी जय जयकार हो।
आपके गुणों का यश तीनों लोकों में फैले।

जगद्गुरु श्रील प्रभुपाद जी की जय
श्रील गुरुदेव जी की जय

समस्त सेखड़ी परिवार
एवं
शुभचिंतक

* * *

. . . With Best Compliments from . . .

18 x 23 / 8
C T P
18 plates

144 pages Total

Juz bandi stiching